क्या हम दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं?

थॉमस पोगे

अनुवादः कमल नयन चौबे

क्या हम दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं?

थॉमस पोगे[1]

भाग I प्रस्तावना

शीर्षक में जो सवाल किया गया है, उसका जवाब देने के लिए यह जरूरी है कि हम पहले इसके अर्थ की व्याख्या करें और उपलब्ध अनुभवसिद्ध (empirical) प्रमाणों का परीक्षण करें। पहला काम प्रस्तावना के रूप में इस भाग I से शुरू होता है। इस भाग में उन दो समूहों के बारे में मोटा-मोटी विवरण दिया गया है, जिनके संबंधों के बारे में इस लेख में जाँच-पड़ताल की गई है। ये दो समूह हैं: दुनिया के गरीब और वे लोग जिसे इस लेख में 'हम' कहकर संबोधित किया गया है। इसके बाद भाग II में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि मानवाधिकारों के उल्लंघन का क्या अर्थ है। मैं यह तर्क दूँगा कि मानवाधिकारों के उल्लंघन में मानवाधिकारों की गैर-पूर्णता या उनका पूरा न होना (non fullfillment) शामिल है। इसके अलावा, इसमें इस गैर-पूर्णता से मानव-कर्त्ताओं का एक विशिष्ट कारणात्मक संबंध (causal relations) भी होता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि मानवाधिकारों के उल्लंघन के इस समझ में सिर्फ अंत:क्रियात्मक उल्लंघन (interactional violation) ही शामिल नहीं है (ये सीधे तौर पर मनुष्यों द्वारा किए जाते हैं), बल्कि इसमें संस्थात्मक उल्लंघन भी शामिल हैं (मनुष्यों द्वारा ऐसे उल्लंघन संस्थात्मक व्यवस्थाओं के माध्यम से किए जाते हैं)। भाग I और भाग II में सवाल के स्पष्टीकरण के आधार पर भाग

---

[1] येल यूनिवर्सिटी में दर्शन और अंतर्राष्ट्रीय मामलों के लिटनर प्रोफेसर, ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी सेन्टर फॉर अप्लाइड फिलॉसफी एंड पब्लिक एथिक्स (सीएपीपीई) के प्रोफेशनल फेलो, यूनिवर्सिटी ऑफ सेन्ट्रल लंकाशायर में एडजंक्ट फेलो, ओस्लो यूनिवर्सिटी सेन्टर फॉर द स्टडी ऑफ माइंड इन नेचर (सीएसएमएन) में रिसर्च डायरेक्टर और नार्वेजियन ऐकेडमी ऑफ साइंस के सदस्य। थॉमस पोगे ने हार्वर्ड से दर्शनशास्त्र में अपनी पीएच. डी की है। कांट तथा नैतिक और राजनीतिक दर्शन पर इनकी बहुत सी किताबें प्रकाशित हुई हैं। हाल ही में इनकी किताब *पॉलिटिक्स एज यूजुअल (Politics As Usual)* प्रकाशित हुई है। अभी वे एक फार्मास्यूटिकल पेंटेंट व्यवस्था में सुधार करने के लिए एक टीम के साथ काम कर रहे हैं। इसका मकसद यह है कि दुनिया भर में ज्यादा बेहतर दवाईयों तक गरीबों की पहुँच बढ़े (www.healthimpactfund.org).

III में कुछ ऐसे प्रमाणों पर विचार किया जाएगा जो इस सवाल का जवाब देने के लिए प्रासंगिक हैं। इन प्रमाणों से यह नतीजा निकलता है कि कोई ऐसी परा‍राष्ट्रीय (supranational) संस्थात्मक व्यवस्था है जिसके कारण बड़े पैमाने पर मानवाधिकारों का उल्लंघन हो रहा है। इन प्रमाणों से उल्लंघन का अंदाजा लगाया जा सकता है और इनसे यह भी पता चलता है कि इस तरह के उल्लंघन से बचा जा सकता है। दरअसल, हम सामूहिक रूप से इस व्यवस्था को थोपकर दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं।

आखिर दुनिया के गरीब लोग कौन हैं? मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा-पत्र के अनुसार हम उन्हें इस रूप में परिभाषित कर सकते हैं कि वे लोग गरीब हैं 'जिनका जीवन स्तर उनके और उनके परिवार की भलाई के लिए पर्याप्त नहीं है। जीवन-स्तर में भोजन, कपड़ा, मकान और स्वास्थ्य सेवाएँ शामिल हैं।'[2] यह बहुत ही अस्पष्ट सी परिभाषा है, लेकिन निश्चित रूप से इसमें दुनिया की जनसंख्या का बड़ा शामिल हो जाता है। वर्ष 2005 के आँकडों के अनुसार इस समय दुनिया की आधी आबादी प्रति हफ्ते 9 डॉलर से भी कम पर गुजारा कर रही थी (वैश्विक औसत साप्ताहिक आय 66 डॉलर था)। यह निश्चित रूप से गरीबी की तरह लगता है। लेकिन हमें यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि एक गरीब देश में खाने के जरूरी सामानों की कीमत संयुक्त राज्य अमेरीका की तुलना में आधी, एक तिहाई या उससे भी कम होती है। इसलिए गरीब देशों में बुनियादी जरूरत की वस्तुओं की कीमत के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बहुत सारे गरीब देशों में भी लोगों का जीवन-स्तर अच्छा हो सकता है (इनमें से कुछ की स्थिति अभाव वाले देशों में तुलनात्मक रूप से अच्छी होती है)। लेकिन इस तरह की संभावनाओं के बावजूद इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि विश्व की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा *सार्वभौमिक घोषणापत्र* की परिभाषा को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसमें वे सभी लोग शामिल हैं जो 2005 में मानवता की 30 प्रतिशत सबसे गरीब जनसंख्या से जुड़े हुए थे और इस तरह हर

[2] यूनिवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्युमन राइट्स, अनुच्छेद 25, जी. ए. रेस 217(III)ए, यू.एन. डॉक. ए/रेस.217(III) (दिसम्बर 10, 1948).

हफ्ते 4 डॉलर से भी कम पर गुजारा करते थे। बुनियादी जरूरतों की वस्तुओं की कीमत कम होने के बावजूद यह नहीं कहा जा सकता है कि उनका जीवन-स्तर ठीक-ठाक था।[3]

'हम' से मेरा तात्पर्य विकसित देश के नागरिकों से है (संयुक्त राज्य अमेरीका, यूरोपीय यूनियन, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड)। ये वे लोग हैं जिनके पास इतनी मानसिक प्रौढ़ता (mental maturity), शिक्षा और राजनीतिक अवसर है कि ये अपनी सरकारों के विदेश नीतियों की जिम्मेदारी में भागीदारी कर सकते हैं। ये पराराष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्थाओं को बनाने की अपनी सरकारों की नीतियों को भी प्रभावित कर सकते हैं। यह परिभाषा यह मानकर चलती है कि इन सभी देशों के नागरिक अपनी सरकारों द्वारा इनके नाम पर किए जाने वाले कामों की सामूहिक

---

[3] इस पैराग्राफ में विश्व बैंक के ब्रैंको मिलानोविक (Branko Milanovic) द्वारा दिए गए आँकड़ों का उपयोग किया गया है। मिलानोविक ने एक व्यक्तिगत ई-मेल के द्वारा 25 अप्रैल 2010 को मुझे ये आँकडे दिए थे। उनकी गणना के मुताबिक 2005 के बीच में (median) वार्षिक आय 465 डॉलर प्रति व्यक्ति थी और इसमें तीस प्रतिशत लोगों की आय 211 डॉलर थी। ई-मेल फ्रॉम ब्रैंको मिलानोविक, विश्व बैंक के डेवलपमेंट रिसर्च ग्रुप के मुख्य अर्थशास्त्री, वर्ल्ड बैंक (अप्रैल 25, 2010) (यह फाइल लेखक के पास है)। असमानता के मापन के संदर्भ मिलानोविक के प्रसिद्ध शख्सियत हैं। इनकी प्रकाशित किताबों में भी इसी तरह की सूचना है। लेकिन ये सूचनाएँ थोड़ी पुरानी हैं। देखें, ब्रैंको मिलानोविक, ट्रू वर्ल्ड इन्कम डिस्ट्रीब्यूशन, 1988 एंड 1993: फर्स्ट कैलकुलेशन बेस्ड ऑन हाउसहोल्ड सर्वेज अलोन, 112 इकोन जे. 51, 51-92 (2002); ब्रैंको मिलानोविक, वर्ल्ड्स अपार्ट: मेजरिंग इंटरनेशनल एंड ग्लोबल इनइक्वालिटी (2005); ब्रैंको मिलानोविक, द हैव एंड हैव-नॉट्स: अ ब्रीफ एंड इडियोसिंक्रेटिक हिस्ट्री ऑफ वर्ल्ड इनइक्वालिटी (2011)। अमूमन असमानता और गरीबी को खरीदने की शक्ति की समानता (purchasing power parities) के अनुसार समायोजित किया जाता है। मैं मानता हूँ कि असमानता के संदर्भ में यह तरीका ठीक नहीं है क्योंकि इसका लोगों की वरीयता से संबंधित आँकड़ों से टकराव है। अमीर लोग आसानी से सस्ती कॉलोनियों में बस सकते हैं। लेकिन वे ऐसा नहीं करते हैं। यह इस बात को दिखाता है कि उन्हें अपने द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं के ऊँची कीमतों के बदले में कोई और मूल्य मिलता है। दरअसल, गरीबी के मापन के संदर्भ में मूल्यों का समायोजन सही है। लेकिन व्यक्तिगत घरेलू उपभोग के खर्च के संदर्भ में खरीदने की शक्ति की समानता (purchasing power parity) की तुलना यहाँ प्रासंगिक नहीं है क्योंकि वे ऐसी वस्तुओं और सेवाओं की कीमत दिखाते हैं जिन्हें पूरी दुनिया भर में उपयोग में लाया जाता है। इस कारण ये बुनियादी खाद्य वस्तुओं को बहुत कम वजन देते हैं। ये वस्तुएँ गरीब देशों में सस्ती होती हैं। लेकिन ये इतनी सस्ती नहीं होती हैं जितना कि खरीदने की शक्ति की समानता (purchasing power parity) के द्वारा बताया जाता है। विस्तृत विवेचना के लिए देखें थॉमस पोगे, पॉलिटिक्स एज युजुअल: व्हाट लाइज बिहाइन्ड द प्रो-पुअर रिटॉरिक (यहाँ के बाद से पॉलिटिक्स एज युजुअल, प्वाइंट 4.2, पृ. 79-85, और एंडनोट 127, पृ. 213 (2010).

जिम्मेदारी स्वीकार करते हैं। बहरहाल, सभी नागरिक इस जिम्मेदारी में भागीदारी नहीं करते हैं। बच्चों को इससे पूरी तरह से बाहर रखा जाता है। गंभीर मानसिक बीमारी से ग्रस्त लोगों को भी इसमें शामिल नहीं किया जाता है। मैं अब इससे आगे नहीं जाना चाहता हूँ और मैं यह यह नहीं चाहता हूँ कि लोगों को उनकी कम आय या कम शिक्षा के आधार पर इससे बाहर रखा जाए। सन् 1787 में में मैनचेस्टर में चले दासता विरोधी अभियान में वहाँ के बहुत कम पढ़े-लिखे और बहुत गरीब मजदूरों ने अपनी जीविका को जोखिम में डालकर हिस्सा लिया। यदि इसी तरह से गरीब और कम शिक्षा प्राप्त नागरिक भी अपनी जिम्मेदारियों को स्वीकार करें और उन्हें निभाएँ, तो उनसे यह कौन कह सकता है कि वे गलत कर रहे हैं, उनकी ऐसी कोई जिम्मेदारी नहीं है इसलिए उन्हें इस बारे में चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है? दूसरी ओर, स्टील के कारखाने में काम से निकाले जा चुके मजदूर और संयुक्त राज्य में संघर्ष कर रही अकेली माताओं जैसे समूहों को भी के बारे में भी जबर्दस्ती यह नहीं कहना चाहता हूँ कि वह नागरिक के रूप में अपनी जिम्मेदारियों को पूरा कर रही है या नहीं।[4] मैं इस तरह के मामलों में कोई फैसला नहीं दूँगा क्योंकि ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि हममें से प्रत्येक अपने बारे में किस फैसले पर पहुँचता है। मेरा यह विश्वास है कि मेरा देश अपने नागरिकों के नाम पर जो कुछ भी करता है, मैं उसकी जिम्मेदारी में भागीदारी करता हूँ। मैं इस बात की व्याख्या करूँगा कि मैं किन मानवाधिकारों के उल्लंघन (deficit) के लिए खुद को भी जिम्मेदार (co-responsible) मानता हूँ और क्यों। आपको खुद यह फैसला करना है कि आप इन कारणों को बहुत ही मजबूत मानते हैं या नहीं; या विचार करने के बाद क्या आप खुद को इतना कमजोर, अशिक्षित और वंचित पाते हैं कि आप नागरिकता के इन साधारण जिम्मेदारियों से बचना चाहते हैं।

भाग II

एक मानवाधिकार का उल्लंघन करने का क्या अर्थ है?

[4] इस विषय पर मैं डेबरा सेट्ज से विचार-विमर्श करता रहा हूँ। देखें, डेबरा सेट्ज, व्हाट डू वी ओ टू ग्लोबल पुअर?, 19 एथिक्स एंड इंटेल्फ, (Ethics and Int'laff) 47, 50-51 (2005); और थॉमस पोगे, सिवियर पोवर्टी एज अ वॉयलेशन ऑफ निगेटिव ड्युटीज, 19 एथिक्स एंड इंटेल्फ, (Ethics and Int'laff) 55, 80-83 (2005).

इस भाग में मैं विस्तार से यह बताऊँगा कि मानवाधिकारों के उल्लंघन की मेरी समझ क्या है। मानवाधिकारों के उल्लंघन में एक मानवाधिकार का पूरा न होना (non fullfillment) और ऐसा न होने में मानव कर्त्ताओं (human agents) की सुनिश्चित सामान्य जिम्मेदारी- दोनों ही शामिल है। मानवाधिकारों के उल्लंघन के इन दो पहलूओं के बारे में क्रमशः सेक्शन 'अ' और सेक्शन 'स' में बताया गया है। बीच में, सेक्शन 'ब' में मानवाधिकारों की मानकीयता (normativity) के बारे में संक्षेप में बताया गया है। यहाँ यह स्पष्ट करने की कोशिश की गई है कि इनका नैतिका और कानून से क्या संबंध है। सेक्शन 'द' इस भाग का आखिरी हिस्सा है जिसमें इस बात की विवचेना की गई है कि पीछे जिन बातों पर विचार किया गया है, उससे मानवाधिकारों के उल्लंघन की किस तरह की अवधारणा सामने आती है।

अ. मानवाधिकारों का पूरा न होना (Non-fulfillment)

यदि किसी व्यक्ति की एक विशिष्ट मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तु तक पहुँच नहीं है, तो यह कहा जाता है कि उस खास व्यक्ति का वह खास मानवाधिकार पूरा नहीं हो रहा है (unfulfilled)। यह जरूरी वस्तु किसी मानवाधिकार में मिलने वाला अधिकार है: कहीं भी आने-जाने या समान राजनीतिक भागीदारी या बुनियादी शिक्षा या हमले से आजादी आदि इसके उदाहरण हैं। जब हम दुनिया के गरीबों के मानावाधिकारों पर ध्यान देते हैं तो सबसे पहले उस मानवाधिकार की ओर ध्यान जाता है जिसके बारे में भाग I में बताया जा चुका है: यह पर्याप्त जीवन स्तर के लिए जरूरी वस्तुएँ हासिल करने का अधिकार है। लेकिन सिर्फ यही एकमात्र मानवाधिकार नहीं है। जिन लोगों के पास एक पर्याप्त जीवन-स्तर के लिए जरूरी वस्तुएँ नहीं होती हैं, उनके पास दूसरे मानवाधिकार भी नहीं होते हैं। मसलन, बहुत सारे लोगों को गरीबी के कारण ऐसे काम करने पड़ते हैं जिसमें उन्हें फैक्टरी के सुपरवाइजर या घरेलू रोजगारदाताओं (employers) से बेइज्जती का सामना करना पड़ता है। बहुत सारी महिलाओं को इसलिए घरेलू मारपीट या बलात्कार का सामना करना पड़ता है क्योंकि वे अपने पति को तलाक देने का जोखिम नहीं ले सकती हैं। इनके पास रहने के लिए सुरक्षित घर नहीं होता है। बहुत सी महिलाओं को अपने घरों से बहुत दूर, दूसरी जगह से पीने का पानी लाना पड़ता है। कई ऐसी महिलाएँ भी होती हैं जिनके अपने सगे-संबंधी उन्हें वेश्यावृति के धंधे में ढ़केल देते हैं; या वे ऐसे दलालों के हाथ

पड़ जाती हैं जो उन्हें अगवा कर लेते हैं या उन्हें यह झाँसा देकर विदेश भेज देते हैं कि वहाँ वे उन्हें एक अच्छा काम दिलाएँगे जिसमें उन्हें बढ़िया वेतन मिलेगा। अधिकांश गरीब लोगों के पास अपने कानूनी अधिकारों की हिफाजत करने का कोई साधन नहीं होता है, इसलिए ये आसानी से अवमानना, बेदखली या व्यक्तिगत प्रभुत्व का शिकार हो जाते हैं।

ऐसे में एक विशेष व्यक्ति के विशेष मानवाधिकार को पूरा करने (fulfillment) और न करने (non-fulfillment) के बीच अनुभवसिद्ध अंतर (emperical distinction) का क्या मानकीय महत्व है? किसी वस्तु के बारे में मानवाधिकारों का दावा करके कोई व्यक्ति कम-से-कम निम्नलिखित दो दावे करता है- पहला, यह दावा किया जा रहा है कि यह बात बहुत ही महत्वपूर्ण है कि मनुष्यों की इस वस्तु तक पहुँच होनी चाहिए। इस वस्तु तक पहुँच होने पर अधिकार-धारक या दूसरे मनुष्यों का महत्वपूर्ण हित पूरा होता है।[5] दूसरा, यह दावा किया जा रहा है कि ये महत्वपूर्ण हित दूसरे मनुष्यों के कुछ महत्वपूर्ण कर्त्तव्यों का औचित्य भी बताते हैं। ये कर्त्तव्य इस बात को सुनिश्चित करते हैं कि दरअसल, मनुष्यों को अपने मानवाधिकारों के लिए जरूरी वस्तुएँ सुनिश्चित रूप से मिलें। दूसरा दावा ऐसे मामलों में नाकाम हो जाता है वस्तुओं तक पहुँच होने में मनुष्यों की कोई भूमिका न हो। मसलन, मनुष्य अमरता या पूर्ण याददाश्त को सुनिश्चित नहीं कर सकते हैं (या वे अभी तक ऐसा नहीं कर पाए हैं?)। यह ऐसे मामलों में भी नाकाम हो जाता है जहाँ इनसे जुड़े दायित्व इतने भारी भरकम हो कि वर्तमान दुनिया में इन्हें पूरा करना नामुमकिन हो; सुरक्षित रूप से सेक्शुअल संबंध या सेक्शुअल नजदीकी हासिल करने में भी लोगों का हित शामिल होता है, लेकिन यह इसलिए ज्यादा प्रभावकारी नहीं है, क्योंकि इसका अन्य मनुष्यों पर सीधा प्रभाव (या बोझ) पड़ता है।

एक मानव-अधिकार का अस्तित्व यह मानकर चलता है कि दूसरे दावे का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। लेकिन यह इस बात पर जोर नहीं देता है कि जब किसी व्यक्ति के मानवाधिकार पूरे न हों, तो किसी दूसरे लोगों का कोई दायित्व बनता है। यदि कोई लड़की भूखी

---

[5] मसलन, विचार-अभिव्यक्ति की आजादी सिर्फ उनके लिए महत्वपूर्ण नहीं है जो अपने विचार व्यक्त करते हैं। बल्कि यह बात उन लोगों के लिए भी महत्वपूर्ण है जिन तक ये विचार पहुँचते हैं; कई दफा प्रचार या पब्लिसिटी का डर अन्याय और बुरे बरताव को रोकता है।

या बिना घर के है, तो ऐसे में उसका पर्याप्त जीवन-स्तर पाने का मानवाधिकार पूरा नहीं हो रहा है। लेकिन इस कारण उससे बहुत दूर रह रहे लोगों का कोई दायित्व नहीं बनता हैं। इसका कारण यह है कि उससे दूर रहने वाले लोग उसके पास पहुँचकर उसे वे वस्तुएँ नहीं दे सकते हैं, जिसकी उसके पास कमी है। यह बात एक ऐसे समाज के बारे में भी सच है जहाँ ऐसी ही कोई अन्य लड़की रह रही है। इस लड़की के पास भी भोजन या रहने का कोई ठौर-ठिकाना नहीं है। इस समाज में बहुत सारे लोग उसकी मदद करना चाहते हैं, लेकिन उन सब की माली हालत एक जैसी ही है। यानी सभी लोग इस लड़की की तरह ही जिंदगी की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए जूझ रहे हैं। यहाँ दूसरों की मदद करना बहुत मुश्किन काम है। इसलिए लोगों से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वे दूसरों की मदद करें। लेकिन इस तरह की स्थिति होने का मतलब यह नहीं है कि मानवाधिकारों के सवाल की उपेक्षा की जाए। हमेशा ऐसी स्थिति नहीं होती है जब लोगों का दूसरों के प्रति कोई दायित्व न हो। इस दुनिया में बहुत सारे लोग ऐसे हैं जिनके पास सामान्य जीवन-स्तर के लिए जरूरी न्यूनतम वस्तुएँ भी नहीं हैं; लेकिन इस दुनिया में ऐसे लोग भी हैं यह सुनिश्चित करने में मदद कर सकते हैं कि इन लोगों को ये वस्तुएँ मिलें। यह बात भी बहुत ही महत्वपूर्ण है कि लोगों के पास भोजन, कपड़ा, मकान, और स्वास्थ्य सेवा जैसी बुनियादी जरूरत की वस्तुएँ हों। इसलिए यह हो सकता है कि बहुत से मौकों पर किसी भी व्यक्ति का यह दायित्व न बनता हो कि वे इन जरूरतों को पूरा करें। लेकिन इसके बावजूद *मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा-पत्र* के अनुच्छेद 25 में बताए गए ये अधिकार बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

कर्त्तव्यों और दायित्वों के बीच अंतर के संबंध में भी यह बात कही जा सकती है। कर्त्तव्य सामान्य होते हैं और दायित्व विशिष्ट होते हैं। मसलन, किसी का यह सामान्य कर्त्तव्य हो सकता है कि वह अपने वायदों का पालन करे; और इसी कर्त्तव्य से यह दायित्व उत्पन्न होता है कि वह अपने सहकर्मी की किताब वापस करे, जिसे वापस करने का वायदा उसने किया था। सिर्फ कुछ खास परिस्थितियों में ही कर्त्तव्य से दायित्व उत्पन्न होते हैं। मसलन, किसी का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने वायदों को पूरा करे। लेकिन यदि उसने कोई वायदा नहीं किया है तो उसका कोई दायित्व नहीं बनता है। मसलन, हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम भूखे लोगों को भोजन दें। लेकिन यदि कोई भूखा व्यक्ति नहीं है तो इस कर्त्तव्य से कोई दायित्व उत्पन्न नहीं होता है; या फिर यदि किसी व्यक्ति के पास अपने खाने के लिए ही कुछ न हो तो ऐसी स्थिति में भी उसका यह

दायित्व नहीं है कि वह दूसरे लोगों को खाना दे। इन स्थितियों में किसी का कोई दायित्व नहीं है। लेकिन इससे लोगों कर्त्तव्य होने की बात खत्म नहीं होती है। यह कर्त्तव्य तब तक खत्म नहीं होता है जब तक इस दुनिया में वास्तविक रूप से मौजूद दूसरी स्थितियों में इस कर्त्तव्य से दायित्व उत्पन्न न हो। इसके विपरीत, किसी का यह कर्त्तव्य नहीं होता है कि वह दुनिया में दूसरे लोगों को अमरता प्रदान करे। इसका कारण यह है कि हमारी दुनिया में कोई भी ऐसी स्थिति नहीं आ सकती है जब इस तरह का कर्त्तव्य किसी ऐसे संभावित दायित्व को उत्पन्न करे।

ऐसे में यह सवाल सामने आता है कि मानवाधिकार से जुड़े कर्त्तव्य क्या होते है? या ज्यादा स्पष्ट रूप से कहें तो कौन से कर्त्तव्य एक न्यूनतम ठीक-ठाक जीवन-स्तर के मानवाधिकार के से जुड़े होते हैं? हम सम्मान-सुरक्षा-पूरा करने (respect-protct-fulfill) की त्रयी का परीक्षण करके इस सवाल का जवाब देने की कोशिश कर सकते है। मानवाधिकारों के क्षेत्र में काम करने वाली अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियाँ इन्हीं तीनों को आधार मानते हुए विचार करती हैं। इस त्रयी (tirad) हेनरी श्यू की प्रसिद्ध किताब बेसिक राइट्स से मानी जाती है। इस किताब में इस बात पर जोर दिया गया है कि हर बुनियादी अधिकार इससे जुड़े तीन कर्त्तव्यों को जन्म देता है:

1. वंचना से बचना

2. वंचित होने से बचना

i कर्त्तव्य (1) का लागू करके और

ii संस्थाओं को इस तरह बनाना जिससे कर्त्तव्य (1) का उल्लंघन करने में लोगों कोई फायदा न हो।

3. वंचित लोगों की मदद करना

i. जो लोग किसी की खास जिम्मेदारी हैं

ii. जो लोग कर्त्तव्य (1), (2-i) और (2-ii) को पूरा करने में समाज की नाकामी का शिकार रहे हैं; और

iii. जो लोग प्राकृतिक आपदाओं का शिकार रहे हैं।[6]

इस वर्गीकरण से प्रभावित होकर फिलिप एल्स्टॉन (Phillip Alston) और एस्बजर्न एडी (Asbjorn Eide) ने 1980 के दशक में सम्मान, सुरक्षा और पूरा करने (respect-protect-fulfill) की त्रयी (triad) को पेश किया।[7] 1999 में संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की समिति द्वारा अपनाए गए प्रसिद्ध जेनरल कॉमेंट (या सामान्य टिप्पणी) 12 के द्वारा इस त्रयी को और ज्यादा विस्तार दिया गया। इस जेनरल कॉमेंट के अनुच्छेद 15 में यह कहा गया है:

किसी भी अन्य मानवाधिकार की तरह ही पर्याप्त भोजन का अधिकार राज्यों पर तीन तरह के या तीन स्तरों के दायित्व थोपता (Impose) है: अर्थात् सम्मान देने, सुरक्षा करने और पूरा करने (fulfill) का दायित्व। दरअसल, पूरा करने (fulfill) के दायित्व में मददगार होने (facilitate) और उपलब्ध कराने (provide)- दोनों ही तरह का दायित्व शामिल है। पर्याप्त भोजन पाने के मानवाधिकार को सम्मान देने के दायित्व का मतलब है कि राज्य कोई ऐसा कदम न उठाए जिससे लोगों की पर्याप्त भोजन पाने से वंचित हों। पूरा करने (fulfill) (या मदद करने facilitate) के दायित्व का अर्थ है कि राज्य को सक्रिय रूप से संसाधनों का इस तरह प्रयोग करना चाहिए जिससे लोगों की जीविका सुनिश्चि हो। जीविका की सुरक्षा में खाद्य सुरक्षा (food security) भी शामिल है। इसके अलावा, मान लीजिए कि कोई व्यक्ति या समूह पर्याप्त भोजन के अपने मानवाधिकार का प्रयोग नहीं कर पा रहे हैं। इसके पीछे जो कारण हैं उन पर इनका कोई नियंत्रण नहीं है। ऐसे में, राज्य का यह दायित्व है कि वह इस अधिकार को सीधे तौर पर पूरा करे

---

[6] हेनरी श्यू, बेसिक राइट्स: सबसिस्टेंस, एफ्ल्यूऐंस, एंड यू.एस. फॉरेन पॉलिसी 60 (दूसरा संस्करण 1996) (1980).

[7] इन्होंने अपने शोध-कार्यों में हेनरी श्यू के प्रभावों को स्वीकार किया है। उदाहरण के तौर पर देखें, फिलिप एल्स्टॉन, इंटरनेशनल लॉ एंड द राइट टू फूड एज अ ह्युमन राइट 162, 169-174 (एस्बजॉर्न एडी और अन्य द्वारा संपादित, 1984); द राइट् टू फूड (फिलिप एल्स्टॉन और कैटरीयना टोमास्वस्की, संपादित, 1984)

(fulfill) (उपलब्ध कराए) (provide)। यह दायित्व उन लोगों पर भी लागू होता है जो प्राकृतिक या अन्य आपदाओं के शिकार हुए हैं।[8]

इस तरह के चिंतन (reflections) में मोटे तौर पर दो ऐसी सीमाओं को स्वीकार किया जिन्हें दुनिया के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में भी मान्यता दी जाती है: अर्थात् मानवाधिकार राज्यों के लिए कुछ कर्त्तव्य तय करते हैं; और मानवाधिकार से संबंधित ये कर्त्तव्य सिर्फ उसी राज्य के होते हैं जिसके क्षेत्राधिकार में कोई व्यक्ति आता है। यह व्यक्ति अपनी शारीरिक उपस्थिति के कारण किसी राज्य के क्षेत्राधिकार में आ सकता है; या फिर नागरिकता या निवास के कानूनी बंधन के कारण वह उस राज्य के क्षेत्राधिकार में आ सकता है।[9] मैंने इन सीमाओं का उल्लेख इसलिए किया है क्योंकि बाद में मैं इन पर और इनसे संबंधित विश्वासों पर भी सवाल खड़ा करूँगा। यह बात पूरी तरह से स्पष्ट है कि इनके साथ यह विश्वास जुड़ा हुआ है कि वंचित विदेशी लोगों के मानवाधिकारों के संबंध में सिर्फ उनकी सरकारों और उस देश के लोगों का दायित्व होता है और हमारा (यानी पश्चिमी विकसित देश के लोगों का) इनके प्रति कोई दायित्व नहीं होता है।

---

[8] कॉम.ऑन इकॉन., सॉक., एंड कल्चरल राइट्स, जेनरल कॉमेंट ऑन द राइट् टू एडीक्वेट फूड, आर्ट 11, यू.एन. डॉक, इ/सी.12/1999/5(मई 12, 1995); (यहाँ के बाद से जेनरल कॉमेंट 12), यह इस वेब पते पर उपलब्ध है: http://www2.ohchr.org/english/bodies/cescr/comments.htm [इससे संबंधित हाइपरलिंक '12 द राइट् टू एडीक्वेट फूड (आर्ट 11)]'

[9] अधिकांश लोग यहाँ इस बात को भी जोड़ना चाहेंगे कि मानवाधिकारों पर आधारित राज्यों का दायित्व उन इलाकों में रहने वाले लोगों पर भी लागू होता है जिन पर वे हमला करते हैं या कब्जा करते हैं। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि इजरायल अपने कब्जे वाले क्षेत्रों में रहने वाले सभी लोगों के मानवाधिकारों के लिए जवाबदेह है। इसी तरह से संयुक्त राज्य अमेरीका का इराक, अफगानिस्तान, ग्वानातोनामो बे के कई भागों पर कब्जा है। इसके द्वारा दुनिया के विभिन्न भागों में विभिन्न आधिकारिक या गोपनीय अड्डों भी संचालित किए जाते हैं। इनके बारे में यह कहा जा सकता है कि यहाँ रहने वाले लोगों के मानवाधिकारों की हिफाजत करना भी अमेरिका का दायित्व है।

ब. मानवाधिकारों का कानून और नैतिकता से संबंध

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बहुत से देशों में और अंतर्राष्ट्रीय रूप से मानवाधिकारों की चिंता का उभार हुआ। जो लोग इस प्रक्रिया के भाग रहे हैं उन्होंने यह स्वीकार किया है कि अस्तित्वमान (existing) मानवाधिकार कानून न तो पूर्ण हैं और न ही पर्याप्त। उन्होंने यह भी माना है कि विभिन्न स्थानों पर इन कानूनों को मान्यता नहीं दी गई और न ही इन्हें पूरी तरह स्वीकार किया गया है। दरअसल, मानवाधिकारों के विमर्श में उन दो सीमाओं का बहुत ज्यादा प्रभुत्व है जिनका जिक्र हमने ऊपर किया है। यदि कोई इन दो सीमाओं से असहमति जताता है तो उसकी स्थिति बेसबॉल के एक ऐसे खिलाड़ी की तरह मानी जा सकती है जो खेल के नियमों को जानने के बाद यह कहता है कि वह इन नियमों से असहमत है।

मानवाधिकार बेसबॉल के नियमों से अलग होते हैं। दरअसल, ये अधिकांश राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कानूनों से भी अलग होते हैं। इस अंतर को स्पष्ट करने के लिए यह कहा जाता है कि मानवाधिकार सिर्फ कानून का भाग नहीं होते हैं। इसकी बजाय, ये एक ऐसे नैतिक मानक भी होते हैं जिन्हें हासिल करने की कोशिश सभी कानूनों द्वारा की जानी चाहिए। बहुत से देशों के कानून अभी भी इस मानक के अनुसार नहीं हैं। कानून के भीतर मानवाधिकार इस तरह से शामिल होते हैं कि ये इससे आगे का संकेत करते हैं। ये एक ऐसे मानकीयता (normativity) के बारे में बताते हैं जो अपने अस्तित्व के लिए कानून पर निर्भर नहीं होता है। इसमें विधायिका या न्यायपालिका द्वारा संशोधन नहीं किया जा सकता है और न ही ये इसे निरस्त कर सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय कानून या परंपराओं आदि के द्वारा भी इन में बदलाव नहीं किया जा सकता है। यह बिंदु इयुस कोजेन्स (ius cognes) की प्रथागत अंतर्राष्ट्रीय कानून की एक ऐसे मानकों (norms) से कानूनी पृथकता में सामने आती है, जिसके बारे में यह माना जाता है कि उसकी वैधता राज्यों के विशेषाधिकार से परे होती है। यह माना जाता है कि इयुसे कोजेन्स (ius cogens) में आक्रामक युद्ध, जनसंहार, दासता, प्रताड़ना, सैन्य हमला और पायरेसी को रोकने जैसे मानक शामिल हैं।[10] बहुत से कानूनी

[10] कानून द्वारा अपने से आगे संकेत करने का इसी तरह का एक उदाहरण माला इन से (mala in se) और माला प्रोहिबिटा (mala prohibita) का कानूनी अंतर है। इस बारे में बहुत असहमति है कि यह अंतर किस तरह किया जाना चाहिए। लेकिन इस बारे में सहमति है कि कुछ काम माला इन से होते हैं, और कुछ खास नैतिक रूप से

दस्तावेजों के द्वारा भी इस बिंदु को प्रमुखता से अभिव्यक्त किया गया है। मसलन, मानवाधिकारों सार्वभौमिक घोषणा-पत्र की शुरूआत में इस बात का आह्वान किया गया है कि 'मानव परिवार के सभी सदस्यों की बुनियादी गरिमा और समान तथा *अस्तातंरणीय* (Inalianable) अधिकारों को *मान्यता*' दी जानी चाहिए (शब्दों पर जोर मैंने दिया है)। अमूमन इसी तरह अतंर्राष्टीय मान्यता प्राप्त मानवाधिकारों के लिए भी आह्वान किया जाता है। विभिन्न देशों की सरकारें वे कानून के द्वारा कुछ खास अधिकारों को स्वीकार कर रही हैं। वे इन अधिकारों को शुरूआत से (de novo) लागू नहीं करती हैं। उनके द्वारा अहस्तांतरणीय (inalianable) शब्द का प्रयोग इस निष्कर्ष को और ज्यादा मजबूती देता है। एक अस्तांतरणीय (inalianable) अधिकार ऐसा अधिकार है जिसे इसका धारक कभी नहीं खो सकता है; उसकी अपनी किसी गतिविधि (इन अधिकारों को त्यागने या इनके जब्त होने) से भी ये अधिकार खत्म नहीं होते हैं; दूसरों के द्वारा किए जाने वाले किसी कार्य के द्वारा- मसलन कानूनों में बदलाव के द्वारा भी इसे खत्म नहीं किया जा सकता है। इस तरह, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानूनों में इस बात पर जोर दिया जाता है कि हर सत्ता या विशिष्ट अधिकारों की तुलना में मनुष्यों की गरिमा सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। लेकिन ये कानून सिर्फ इसी कारण से खास नहीं होते हैं। इनके खास होने का कारण इनका आत्म-नियंत्रण (self restraint) भी होता है। मानवाधिकार कानून खुद को मानवाधिकारों का स्त्रोत घोषित नहीं करता है। इसके विपरीत, यह इस बात पर जोर देता है कि हर मनुष्य के कुछ खास मानवाधिकार होते

इतने गलत होते हैं कि हर कानूनी व्यवस्था को इनका निषेध करना चाहिए। यह तथ्य है कि कुछ कानूनी व्यवस्थाएँ यातना, बलात्कार, हत्या या दासता की इजाजत देती हैं। लेकिन यह बात इस तरह के कामों को सही साबित नहीं करती है। इसकी बजाय, यह स्थिति उस कानूनी व्यवस्था के खिलाफ सख्त आरोप (indictment) की तरह है। मान लीजिए कि कोई कानूनी व्यवस्था मानवाधिकारों के स्वतंत्र अस्तित्व को मानने या हासिल करने में नाकाम रहती है। ऐसे में, यह माना जाता है कि इसने अपना प्राधिकार (authority) खो दिया है। इस मतलब है कि इसने अपने आदेश की शक्ति खो दी है; और इसमें यह शक्ति भी नहीं है कि यह जिन लोगों से संबंधित है, उन्हें अविवेकशील कारणों (non-prudential reasons) के आधार पर अपना समर्थन करने के लिए कहे या कानून के नियमों से बाँध सके। इसलिए, यह मुमकिन है कि संयुक्त राज्य अमेरीका का सर्वोच्च न्यायलय यह मान ले कि सीरिया में आतंकवादियों गतिविधियों के लिए संदिग्ध व्यक्तियों को मदद देकर संयुक्त राज्य की सरकार ने यातना देकर कुछ भी गलत नहीं किया है। लेकिन इसके बाद भी कुछ सवाल कायम रहते हैं। मसलन, क्या न्यायालय ने कानूनों की सही तरीके से व्याख्या की है; और क्या कानून की इस तरह तरह की व्याख्या उस व्यक्ति के मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं है, जिसके मानवाधिकारों की व्याख्या की जा रही है।

हैं। यदि कोई राज्य इन्हें मान्यता न दे या इन्हें कहीं भी मान्यता न मिले तब भी ये अधिकार प्रासंगिक होते हैं। कानून के द्वारा मानवाधिकारों को जिस तरह तय किया जाता है उससे यह अर्थ निकलता है कि इनका एक स्वतंत्र अस्तित्व है; और इस तरह इसका मतलब यह भी है कि संहिताबद्ध (codified) होने से पहले भी इनका अस्तित्व था और जब सरकारें इनको कानूनी मान्यता देने से इंकार कर देंगी तब भी इनका अस्तित्व कायम रहेगा।

नाजी जर्मनी में मानवाधिकारों का बहुत ज्यादा हनन होने के बाद कानून के आत्म-नियंत्रण (self-restraint) की अवधारणा सामने आई। यह मानव सभ्यता की एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। यदि सरकारें सिर्फ इसलिए इस अवधारणा को स्वीकार करती हैं क्योंकि अन्य सरकारों ने ऐसा किया है तो वे इसके मूल तत्व (essence) को समझने में असमर्थ हैं। लेकिन अमूमन सरकारों ने इसे जिस तरह से अपनाया है उससे यह बात स्पष्ट होती है कि वे इस बात को मानती हैं कि इसका एक स्वतंत्र अस्तित्व है। इन्होंने इस बात को स्वीकार किया है कि यदि नाजी लोग युद्ध जीत जाते तो वे मानवाधिकारों को पूरी तरह से खत्म नहीं करते (लेकिन वे अपने कानून और व्यवहार में व्यवस्थित रूप से मानवाधिकारों का उल्लंघन कर सकते थे)। कानून के आत्म-नियंत्रण (self-restraint) को इसी भावना के साथ स्वीकार किया जाना चाहिए। सरकारें कानूनी टेक्स्ट (legal text) के माध्यम से मानवाधिकारों को तैयार करती हैं और इससे जुड़े संबंधों को स्पष्ट करती हैं। लेकिन इन टेक्स्टों या मूल पाठों को पढ़ते वक्त हमें यह भी समझना चाहिए कि ये अपनी खुद की संकल्पना में सुनिश्चित नहीं हैं। क्या मानवाधिकार हैं, यदि हैं तो वे किस तरह के मानवाधिकार हैं और इन मानवाधिकारों से किस तरह के संबंध जुड़े हुए हैं- सिर्फ टेक्स्ट या मूल पाठ के आधार पर इन सवालों को हल नहीं किया जा सकता हैं।

चूंकि मानवाधिकार कानून अपने से आगे की बातों की ओर संकेत करते हैं, इसलिए मानवाधिकारों से किस तरह के कर्तव्य जुड़े हुए हैं, इस सवाल को इस बात से नहीं मिलाया जा सकता है कि वर्तमान कानून के अंतर्गत सक्षम न्यायालय किन अधिकारों को मान्यता देते हैं। श्यू और जेनरल कॉमेंट 12 के लेखक- दोनों ही इस भावना के साथ इस सवाल पर विचार करते हैं। इस लेखक बाकी हिस्से में उनके उदाहरण का प्रयोग किया गया है।

स. मानवाधिकारों के पूरा न होने (non-fulfillment) से उनके उल्लंघन तक

एक मानवाधिकार के पूरा न होने (non-fulfillment) और इसके उल्लंघन में क्या अंतर है? इस सवाल का जवाब देने के लिए हमें बहुत तरह के कारणात्मक रास्तों के बीच अंतर करना होगा। ये वे रास्ते होते हैं जिसमें किसी व्यक्ति का आचरण किसी अन्य व्यक्ति के मानवाधिकारों के पूरा होने को प्रभावित कर सकता है। जेनरल कॉमेंट 12 में चार अलग–अलग तरह के रास्तों के बारे में बताया गया है। राज्य की कृत्रिम सीमा के बगैर इन अंतरों को नए सिरे से तैयार करते हुए यह कहा जा सकता है कि मानवाधिकार मनुष्यों के लिए चार अलग–अलग तरह के कर्त्तव्य तय करते हैं– पहला, मानवाधिकारों का सम्मान करने का कर्त्तव्य, दूसरा मानवाधिकारों (के लिए जरूरी वस्तुओं तक पहुँच की) सुरक्षा करने का कर्त्तव्य, तीसरा, मानवाधिकारों की वस्तुओं तक (सुरक्षित पहुँच को) उपलब्ध (provide) कराने का कर्त्तव्य; और चौथा, मानवाधिकारों के पूरा होने में मदद करने (facilitate) का कर्त्तव्य। इन चार कर्त्तव्यों की अपनी विवेचना में मैं उन मामलों पर ध्यान दूँगा जहाँ एक कर्त्तव्य की अवहेलना का मतलब होगा मानवाधिकार का उल्लंघन। इस वाक्य से यह पता चलता है कि मानवाधिकारों से संबंधित कुछ कर्त्तव्यों की अवहेलना से मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं होता है। यह बात उन मामलों में सामने आती है जिसमें एक ऐसा दर्शक होता है, जो पूरे मामले में शामिल नहीं होता है, लेकिन तार्किक लागत पर मानवाधिकारों की हिफाजत कर सकता है या उन्हें उपलब्ध करा सकता है। ऐसा करना उनका कर्त्तव्य है, लेकिन यदि वे ऐसा करने में नाकाम रहते हैं तो उन्हें मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाला नहीं माना जा सकता है। वर्ष 1830 के एक ऐसे संपन्न स्वीडी (Swede) पर विचार करते जो दासों को खरीदकर उन्हें स्वतंत्र कर सकता था या वह भारत में भुखमरी का सामना करने कर रहे लोगों के लिए पैसा या भोजन भेज सकता था। बहुत से लोग यह कहेंगे कि उसे ऐसा करना चाहिए था और ऐसा करना उसका कर्त्तव्य था। लेकिन इस तर्क को बहुत ही हल्का तर्क मानते हुए खारिज किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि ऐसे बहुत ज्यादा लोग हैं जिन्हें बचाने की जरूरत है और इस व्यक्ति की क्षमता बहुत ही कम है। ऐसे में, यह बात स्पष्ट नहीं है कि उसके द्वारा मदद न किए जाने से किस व्यक्ति के मानवाधिकार का उल्लंघन हुआ है।[11] ऐसा लगता है कि यहाँ उल्लंघन की भाषा

[11] यह कहते हुए इस काल्पनिक समस्या को हल किया जा सकता है कि कुछ भी न करके उसने हर किसी के मानवाधिकार का उल्लंघन किया है। यह 'होना चाहिए का अर्थ है हो सकता है' (ought implies can) सूत्र का उल्लंघन नहीं है, बशर्ते हम यह जोड़ दें कि नैतिक रूप से जितना मदद करने की जरूरत है, उतनी मदद करके

के अनुचित लगने का कारण यह है कि यदि कुछ लोगों के मानवाधिकारों का पूरा नहीं किया जा रहा है तो इसके लिए स्वीडी (Swede) को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। वह भुखमरी या दासता का शिकार हुए लोगों की मदद कर सकता है, लेकिन उनकी भुखमरी या उनकी दासता इसकी कोई भूमिका नहीं है।[12] मानवाधिकारों के पूरा न होने का हर मामला मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं है। यदि कोई मानवाधिकार अपूर्ण रहता है, तो उसे उसी स्थिति में उल्लंघन की संज्ञा दी जा सकती है, जब एक या एक से ज्यादा ऐसे मनुष्य हो जिनकी गतिविधियों से यह स्थिति उत्पन्न हुई हो; और उन्हें इस बात का इल्म हो कि उनकी गतिविधियों से इस तरह की स्थिति उत्पन्न होगी।

मनवाधिकारों का सबसे स्पष्ट उल्लंघन *सम्मान करने के कर्त्तव्यों* की अवहेलना है। इस कर्त्तव्य में यह बात शामिल है कि 'कोई ऐसा कदम नहीं उठाया जाना चाहिए जिससे किसी व्यक्ति की मानवाधिकार से संबंधित वस्तु तक पहुँच पर रोक लगे।' इस नकारात्मक सूत्रीकरण से यह संकेत मिलता है कि इनकी कल्पना नकारात्मक कर्त्तव्यों के रूप में की गई है: निष्क्रिय रहकर इन कर्त्तव्यों की इज्जत की जा सकती है, और सिर्फ कोई काम करके ही इनकी अवहेलना हो सकती है। आखिर इन कर्त्तव्यों को किन कामों पर रोक लगानी चाहिए? इन्हें ऐसे हर काम पर रोक लगानी चाहिए जो 'तार्किक रूप से बचने लायक' (reasonably avoidable) हो और इससे यह संभावना (foreseeably causes) हो कि इससे कुछ लोगों की मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं तक पहुँच पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। इस सूत्रीकरण में कम-से-कम दो स्पष्टीकरणों की जरूरत है। पहला, यह लग सकता है कि 'तार्किक रूप से बचने लायक' (reasonably redundant) शब्द का यहाँ कोई खास मतलब नहीं है। यदि कोई व्यक्ति यह समझता है कि वह जो काम करने जा रहा है उससे किसी अन्य व्यक्ति की मानवाधिकार के लिए

वह उन लोगों के दावों से भी मुक्ति पा लेता है जिनके लिए उसने कुछ नहीं किया। मुझे यह बात मुमकिन लगती हैं। एक व्यक्ति से यह कहा जा सकता है कि 'मैं हर किसी की मदद नहीं कर सकता हूँ।' लेकिन मदद न करना सिर्फ ऐसी स्थिति में एक अच्छा तर्क है जब कोई व्यक्ति दूसरे लोगों को उतनी मदद दे रहा है जितनी उसे सभी लोगों की मदद करनी चाहिए।

[12] स्वीडी (Swede) को उस स्थिति में भी जिम्मेदार ठहराया जा सकता था, जब उसे दासता या भुखमरी पैदा करने वाले कारकों से कोई फायदा होता (मसलन, उसे अपने पिता द्वारा दास व्यापार में निवेश से संपत्ति मिली होती)।

जरूरी वस्तु तक पहुँच पर रोक लग सकती है, तो (वह यह सोच सकता है कि) वह अपने काम के इस प्रभाव से बचे या उसे इससे बचने की कोशिश करनी चाहिए। लेकिन ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहाँ इस तरह की रोक लगाने से बहुत ज्यादा नुकसान हो सकता है। यह भी हो सकता है कि व्यक्ति जो काम करने की योजना बना रहा था, उससे इस तरह के नुकसान से बचा जा सकता है। ऐसी स्थिति में यह कहा जा सकता है कि यह कर्त्तव्य ऐसे मामलों पर लागू नहीं होता है। इसका कारण यह है कि ऐसे मामलों में व्यक्ति (या कर्त्ता) अपने काम को नहीं छोड़ सकता है। दूसरा, संभावना (causes) में ऐस कामों को भी शामिल किया जाना चाहिए जिससे किसी चीज से रोकने का नकारात्मक प्रभाव भी सामने आए। मसलन, एक कमांडर अपने सैनिकों को यह ओदश देता है कि वे बाँध को तोड़ दे। इस कारण किसानों को अपने फसल की सिंचाई के लिए आवश्यक पानी नहीं मिल पाता है। यदि सैनिक इस आदेश का पालन करते हैं और इसके कारण अकाल पड़ता है, तो यह कहा जा सकता है कि वे और उनका अफसर- दोनों ने ही प्रभावित जनसंख्या के मानवाधिकारों का सम्मान करने के कर्त्तव्य की अवहेलना की है। यह मुमकिन है कि सम्मान करने के कर्त्तव्य के अवहेलना के इस तरह के अप्रत्यक्ष मामलों की गणना करना बहुत ही मुश्किल हो। एक सैन्य शासन एक महिला पत्रकार को शासन के भ्रष्टाचार का मामला उजागर करने वाले रिपोर्ट प्रकाशित करने से मना कर सकता है। इसके लिए वह उसे ब्लैकमेल भी कर सकता है। सैनिक शासक यह धमकी दे सकते हैं कि यदि उसने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की तो वे कुछ राजनीतिक कैदियों की हत्या कर देंगे। महिला पत्रकार को राजनीतिक कैदियों की जिंदगी के खतरे में होने का अहसास है। लेकिन मान लीजिए कि इसके बावजूद भी वह अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करती है। उसके ऐसा करने पर यह कहना ठीक नहीं होगा कि वह राजनीतिक कैदियों के जीवन के मानवाधिकार का सम्मान करने के कर्त्तव्य की अवहेलना कर रही है। यहाँ सिर्फ सैनिक शासन और उसके गुंडे ही मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं, महिला पत्रकार ऐसा नहीं कर रही है (लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसी स्थिति आने पर उसका अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करने का फैसला पूरी तरह से सही फैसला माना जा सकता है)।

सुरक्षा करने के कर्त्तव्य (duties to protect) और उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य (duties to provide) एक जैसे हैं क्योंकि ये दोनों ही सकारात्मक कर्त्तव्य हैं। ये ऐसे कर्त्तव्य हैं जो किसी स्थिति में सक्रिय हस्तक्षेप की माँग करते हैं। निष्क्रिय रहकर इन कर्त्तव्यों को पूरा नहीं किया जा

सकता है। यह उन व्यक्तियों पर भी लागू होता है जो मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए जिम्मेदार नहीं होते हैं, लेकिन जो उसकी कमी को पूरा कर सकते हैं। इस तरह, ऊपर हमने जिस स्वीडी (Swede) का उदाहरण दिया है, उस पर भी ये कर्त्तव्य लागू होते हैं; और दोनों में से किसी भी कर्त्तव्य की अवहेलना करने को मानवाधिकारों के उल्लंघन के रूप में नहीं देखा जाता है। दो सकरात्मक कर्त्तव्यों के बीच इस आधार पर अंतर किया जाता है कि किस तरह के खतरे के संदर्भ में इन कर्त्तव्यों की जरूरत होती है और इनके द्वारा किस तरह का हस्तेक्षेप किया जाता है। यह माना जाता है कि सुरक्षा करने के कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए यह जरूरी है कि जब भी सामाजिक खतरों से मानवाधिकारों के पूरा होने में कोई दिक्कत आए तब निरोधक (preventive) कदम उठाए जाने चाहिए। कई बार ऐसे लोगों की गतिविधियों से भी खतरा उत्पन्न हो जाता है जो बिना मकसद से मानवाधिकार को खतर में डालने वाले काम करते हैं। इन व्यक्तियों के काम को रोकने के लिए निरोधक कदम उठाया जाना चाहिए। इस कर्त्तव्य में यह माँग की जाती है कि किसी संभावित नुकसानदेह काम को या उसके नुकसानदेह प्रभाव को रोककर यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं तक लोगों की पहुँच बनी रहे। उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य में सामाजिक खतरों के बारे में अलग तरह से प्रतिक्रिया देने पर जोर दिया जाता है। इसमें खतरों का निषेध करने की जगह उनके बुरे प्रभावों को असरहीन करने की बात की जाती है। दोनों तरह के कर्त्तव्य इस अर्थ में एक-दूसरे के पूरक हैं कि एक तब तक व्यर्थ (या विवाद का विषय) होता है जब तक दूसरे को पूरा नहीं कर दिया जाता। मान लीजिए कि संयुक्त राष्ट्र की सेना किसी शहर की घेरेबंदी को तोड़ देती है और इस तरह इसकी सामान्य खाद्य आपूर्ति को बहाल कर देती है, तो शहर की जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने का दायित्व खत्म हो जाता है; और इसके विपरीत यदि संयुक्त राष्ट्र शहर के लोगों को भोजन की आपूर्ति करता है, तो यह लोगों को भोजन की आपूर्ति करने के मानवाधिकार के दायित्वों को पूरा करने के लिए शहर की घेरेबंदी को तोड़ने के तर्क को प्रभावहीन बना देता है।[13]

[13] अनुपूरकता के इस तरह के मामलों में कम मँहगे विकल्पों का चुनाव करना ज्यादा ठीक लगता है। बहरहाल, अधिकांश मामलों में उपलब्ध कराने की सफल कोशिशें सुरक्षा करने की सफल कोशिशों की तुलना में कमतर (inferior) विकल्प रही हैं। मसलन, हम शहर की घेरेबंदी का उदाहरण लेते हैं। शहर की घेरेबंदी के दौरान भले ही संयुक्त-राष्ट्र हवाई मार्ग से लोगों तक भोजन आदि पहुँचा दे। लेकिन जब तक घेराबंदी जारी रहती है तब तक

प्राकृतिक आपदाओं से भी कई मानवाधिकारों का पूरा होना खतरे में पड़ जाता है। अमूमन इसे भी उपलब्ध कराने कर्त्तव्यों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। मानवाधिकारों के दस्तावेजों (जिसमें जेनरल कॉमेंट 12 भी शामिल है) इस बात का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि यह इस तथ्य की उपेक्षा करता है कि सामाजिक खतरों की तरह ही इस काम को भी दो तरीकों से किया जा सकता है। ये दो तरीके बुनियादी रूप से अलग हैं। पहला, लोगों तक पहुँचकर नुकसान से बचाना या दूसरा, इसका सामना करने में लोगों की मदद करना। आमतौर पर दूसरे नजरिए की ओर ध्यान दिया जाता है। प्राकृतिक आपदाओं के संदर्भ तकरीबन सभी अंतर्राष्ट्रीय कोशिशों में आपदा आने के पहले लोगों को इससे बचने के लिए तैयार करने की बजाय उन्हें आपदा के बाद उन्हें सहायता दी जाती है। इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय पूर्वाग्रह को ठीक करने की जरूरत है। इसे ठीक करने के संदर्भ में एक अच्छा कदम यह हो सकता है कि प्राकृतिक आपदाओं से मनुष्यों को बचाने के कर्त्तव्यों के लिए मानवाधिकार-सहसंबंधी कर्त्तव्यों (human rights corelative duties) की एक अलग श्रेणी बनाई जाए।

चूंकि ये सभी सकारात्मक कर्त्तव्य हैं, इसलिए मानवाधिकारों के उल्लंघन के संदर्भ में सुरक्षा करने या उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य मोटे तौर पर अप्रासंगिक होते हैं (मैंने यह प्रस्तावित किया है कि इन्हें इसी रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए)। फिर यहाँ इस संदर्भ में दो अन्य बातें कही जा सकती हैं। पहला जो लोग मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं की सुरक्षा करने या उन्हें उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य को पूरा करने के लिए जरूरी प्रभावकारी आचरण को रोकते हैं

लोगों तक मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुएँ सुरक्षित रूप से नहीं पहुँचती हैं। इस तरह मान लीजिए की किसी क्षेत्र पर सैन्य हमला हुआ है। और मान लीजिए कि यह व्यवस्था की जाती है कि इस दौरान लोगों को दवाईयाँ और अन्य स्वास्थ्य सुविधाएँ दी जाएँगी। यह मानवाधिकारों के हनन को थोड़ा कम कर सकता है। लेकिन यदि सैन्य हमले का विरोध किया जाए तो इस संदर्भ में मानवाधिकारों के हर तरह के हनन को खत्म किया जा सकता है। कुछ मामलों में दोनों तरह के कर्त्तव्यों के बीच की संकल्पनात्मक सीमा अस्पष्ट होती है। मसलन, मान लीजिए कि एक देश के शासक नागरिकों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए एक व्यवस्थित पुलिस व्यवस्था का विकास करने में असमर्थ हैं या वे ऐसा नहीं करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में यदि संयुक्त राष्ट्र का सैन्य दल इस काम को अपने हाथ में लेता है, ऐसी स्थिति में संयुक्त राष्ट्र के सैनिकों को यह कहा जा सकता कि वे आपराधिक हिंसा से नागरिकों की सुरक्षा करें या वैकल्पिक रूप से उन्हें वह सुरक्षा उपलब्ध कराए, जो उन्हें अब तक नहीं मिली थी।

उनके बारे में यह कहा जा सकता है कि वे मानवाधिकारों का सम्मान करने के सम्मान के कर्त्तव्य की अवहेलना करते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि वे मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। मसलन, 1994 में किगाली (kigali) में इंटराह्वामें मिलिशिया (Interahamwe militias) के पास बहुत से हथियार थे। यहाँ जेनरल डैलैरिये (Dallaire) का यह मानना था कि इन अधिकारों का उपयोग लोगों के खिलाफ किया जाएगा इसलिए इन्हें जब्त कर लिया जाना चाहिए। लेकिन उनके उच्च अधिकारियों ने ऐसा आदेश नहीं दिया। यदि इन उच्च अधिकारियों को यह पता होता कि इन हथियारों के उपयोग के बारे में जेनरल डैलैरिये (Dallaire) का मूल्यांकन सही है, तो यह कहा जा सकता है कि इन अधिकारियों ने मानवाधिकारों का सम्मान करने के कर्त्तव्य की अहवेलना की है।[14] उन्होंने डैलैरिये (Dallliarie) को कदम उठाने से मना करके उन्होंने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न करने में सक्रिय रूप से दखल दिया जिसमें हजारों निर्दोष लोगों का कत्ल हुआ। इन लोगों के हत्याओं को टाला जा सकता था।

दूसरा, मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं की सुरक्षा करने या उन्हें उपलब्ध कराने में नाकामी को भी मानवाधिकारों के उल्लंघन हो सकते हैं। ऐसा उन मामलों में हो सकता है जहाँ एजेंट या व्यक्ति ने मानवाधिकार के लिए आवश्यक वस्तुओं की सुरक्षा करने या उन्हें उपलब्ध कराने की विशेष भूमिका हासिल कर ली हो। उदारहण के तौर पर यह मान लीजिए कि एक पुलिस अफसर यह देखता है कि एक उद्दंड नवयुवक एक बेघर औरत को पीट रहा है। ऐसी स्थिति में यदि आस-पास खड़े लोग मूकदर्शक रहते हैं तो वे मानवाधिकारों की सुरक्षा करने के अपने कर्त्तव्य की अवहेलना कर रहे हैं। लेकिन यदि वह पुलिस अफसर मूकदर्शक रहता है तो वह सिर्फ मानवाधिकारों की सुरक्षा करने के कर्त्तव्य की अवहेलना ही नहीं कर रहा है, बल्कि वह मानवाधिकारों का सम्मान करने के कर्त्तव्य की अवहेलना भी कर रहा है। वह एक नकारात्मक कर्त्तव्य की अवहेलना कर रहा है: इस कर्त्तव्य के अनुसार हमें किसी पद को हासिल करने के बाद उससे जुड़े काम को करने में कोताही नहीं करनी चाहिए। पीछे हमने वायदे के संबंध में विवेचना की है। यह उदाहरण भी उस विवेचना की तरह ही है। वहाँ हमने यह कहा था कि हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम किसी से किए गए वायदे को न तोड़े। यह कर्त्तव्य नकारात्मक इसलिए है

[14] देखें पोगे, पॉलिटिक्स एज यूजुअल, सुपरा नोट 3, पृ. 168-69.

क्योंकि हम निष्क्रिय (passive) रहकर भी इस कर्त्तव्य को पूरा कर सकते हैं। लेकिन इसके बावजूद यह सकारात्मक दायित्व उत्पन्न कर सकता है (मसलन यदि हमने किसी किताब को वापस करने का वायदा किया है तो हम उसे पूरा करें। पुलिस अफसर, लाइफगार्ड, डॉक्टर आदि के बारे में भी यही बात सच है। यदि कोई व्यक्ति इन भूमिकाओं को स्वीकारता है और उसके बाद इनसे जुड़े कर्त्तव्यों को ठीक तरीके से पूरा नहीं करता है तो वह मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहा है। इन बिंदु उस समय तक विवादास्पद नहीं हैं जब तक किसी खास भूमिका या पद को धारण करने वाला व्यक्ति (मसलन पुलिस अफसर) अपने को पूरा करने में नाकाम रहता है। ये बिंदु उस समय ज्यादा विवादास्पद हो जाते हैं जब किसी पद को धारण करने वाले व्यक्ति की भूमिका गलत तरीके से तय की गई हो। मसलन, जब किसी पद को धारण करने वाले व्यक्ति को कानूनी तौर पर यह कहा जाए कि उसे कुछ खास रंग, धर्म या राजनीतिक रूझान रखने वाले लोगों की मदद नहीं करनी है। या फिर कानून यह प्रावधान कर दे कि उन्हें सिर्फ कुछ खास रंग, धर्म या राजनीतिक रूझान रखने वाले लोगों की ही मदद करनी है। मान लीजिए कि एक लाइफ-गार्ड सिर्फ गोरे लोगों के लिए है। इसके सामने एक काला बच्चा डूबकर मर जाता है और वह उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं देता है। क्या ऐसा करके उसने सिर्फ अपने सकारात्मक कर्त्तव्य की अवहेलना की है या (वहाँ मौजूद अन्य तैराकों के विपरीत) उसने मानवाधिकारों का सम्मान करने के नकारात्मक कर्त्तव्य की भी अवहेलना की है? मदद करने के कर्त्तव्यों (duties to facilitate) पर विचार करने के बाद इस सवाल का परीक्षण करना ज्यादा आसान होगा।

मदद करने के कर्त्तव्यों को स्पष्ट करते हुए जेनरल कॉमेंट 12 में यह कहा गया है कि 'राज्य को निश्चित तौर पर ऐसी गतिविधियाँ करनी चाहिए जिससे लोगों की ऐसे संसाधनों और साधनों तक पहुँच बढ़े जो उनकी जीविका- जिसमें खाद्य सुरक्षा भी शामिल है- को सुनिश्चित करे। सरकार को यह भी कोशिश करनी चाहिए कि लोग इन संसाधनों और साधनों का उपयोग करने में समर्थ हो पाएँ।'[15] जेनरल कॉमेंट 12 के लेखकों ने सम्मान-सुरक्षा-पूरा करने (respect-protect-fulfill) की त्रयी से आगे बढ़ते हुए मदद करने के कर्त्तव्यों (duties to facilitate) की कल्पना की। ये कर्त्तव्य उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य से अलग हैं। उनके लिए मदद करने के कर्त्तव्य

[15] जेनरल कॉमेंट 12, सुपरा नोट 8.

इतने महत्वपूर्ण भी हैं कि इन्हें एक अलग श्रेणी के रूप में देखा जाए। ऐसा क्यों है? समुद्र के किनारे तैरने वाले सभी लोगों को बचाने के लिए लाइफगार्ड की नियुक्ति, बेघर लोगों के लिए ऐसे घरों की व्यवस्था जिसमें उन्हें पोषणयुक्त भोजन मिले और गरीब लोगों के लिए बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करना- राज्य की इस तरह की सभी गतिविधियों को उपलब्ध कराने के कर्त्तव्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है। मदद करने के कर्त्तव्यों की नई श्रेणी के रूप में नई श्रेणी की शुरूआत की सबसे अच्छी व्याख्या यह है कि यह इस बात को मान्यता देता है कि मानवाधिकारों का पूरा होना समाज में पृष्ठभूमि के रूप में काम करने वाली कुल परिस्थितियों पर निर्भर करता है। समाज में पृष्ठभूमि के रूप में मौजूद कुछ परिस्थितियों में से कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जिनमें मनुष्यों द्वारा थोड़ा बदलाव लाया जा सकता है या बिल्कुल ही बदलाव नहीं लाया जा सकता। लेकिन ये स्थितियाँ भी पहले से तय (preorained) नहीं होती हैं, बल्कि ये समाज की पृष्ठभूमि में मौजूद ऐसी अन्य परिस्थितियों से तय होती हैं, जो काफी हद तक मनुष्यों के नियंत्रण में होती हैं। इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात यह होती है कि राज्य किस तरह से एक समाज की संरचना बनाता है या उसे संगठित करता है। मसलन, एक समाज की अर्थव्यवस्था आय और संपत्ति के विरतण पर बहुत गहरा प्रभाव डालती है; इसकी आपराधिक न्याय व्यवस्था का संगठन ही यह तय करता है कि इसके नागरिकों को किस तरह की आपराधिक गतिविधियों का सामना करना पड़ेगा। नागरिकों के विभिन्न समूहों को मिलने वाले फायदे में इसकी शिक्षा व्यवस्था की रूपरेखा बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इससे राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी करने और अपने कानूनी अधिकारों के लिए संघर्ष करने की लोगों की क्षमता को मजबूती मिलती है। जो समाज सही तरीके से संगठित नहीं होते हैं, वहाँ नागरिकों के मानवाधिकारों पर बहुत ज्यादा खतरा होता है। इन खतरों को देखते हुए शासन करने वाले अभिजनों और शायद अन्य नागरिकों को भी यह कहा जा सकता है कि उन्हें मानवाधिकारों का सम्मान करने, उनकी सुरक्षा करने और उन्हें उपलब्ध कराने के कर्त्तव्यों की ओर ध्यान देना चाहिए। लेकिन मान लीजिए कि कोई ऐसा समाज है जहाँ अभिजन वर्ग के सदस्य भ्रष्ट व्यवहार करते हों, या इस समाज में अपने सह-नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए काम करने वाले नागरिकों को देशद्रोही बताकर उन पर मुकदमा चलाया जाता हो या गोपनीय तरीके से काम करने वाले संगठनों के द्वारा इन नागरिकों के खिलाफ

हिंसा की जाती हो। ऐसे समाजों में इस तरह की अपील का बहुत ही कम महत्व है। इस तरह के समाज में संरचनात्मक सुधार की जरूरत होती है अर्थात् इसके पुनर्संगठन की जरूरत होती है।[16]

मदद करने के कर्त्तव्यों में बहुत सारी महत्वपूर्ण बातें शामिल हैं। ये इस बात पर जोर देती हैं कि मानवाधिकारों के पूरा होने में संस्थात्मक व्यवस्थाओं की रूपरेखा का बहुत ज्यादा महत्व है। सिर्फ मानवाधिकारों के पूरा होने (fulfillment) से संबंधित अंत:क्रियात्मक समझदारी (Interactional understanding) के द्वारा ही इस महत्व की उपेक्षा की जाती है। इसमें मोटे तौर पर इन बातों को शामिल किया जाता है: (1) यदि सभी व्यक्ति मानवाधिकारों का सम्मान करने के कर्त्तव्य का पालन करते हैं तो मानवाधिकारों को सार्वभौमिक रूप से पूरा (या हासिल) (fulfilled) किया जा सकता है; (2) अफसोस की बात यह है कि कुछ लोग ऐसा नहीं करते हैं और मानवाधिकारों का उल्लंघन करने की उनकी प्रवृत्ति के कारण सुरक्षा करने के कर्त्तव्यों की जरूरत पड़ती है; (3) दुर्भाग्य से, लोगों के सुरक्षा के अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने की इच्छा या सामर्थ्य मानवाधिकार का सम्मान करने के कर्त्तव्यों की हर तरह की अवहेलना को रोकने में नाकाम होती है; (4) इस तथ्य के कारण, और प्राकृतिक आपदाओं– जो कई दफा लोगों के मानवाधिकारों के पूरा होने में बाधा उत्पन्न कर सकती है– के कारण उपलब्ध कराने के कर्त्तव्य सामने आते हैं। ये वे कर्त्तव्य हैं जिसमें लोगों को ऐसी कमियों से उबरने में मदद की जाती है, जो मानवाधिकारों के लिए जरूरी वस्तुओं तक उनकी पहुँच को बाधित कर सकती है।[17]

---

[16] जेनरल कॉमेंट 12 में इस बिंदु को और ज्यादा स्पष्टता से कहा जा सकता था। लेकिन यदि कोई दस्तावेज बहुत सारे राज्यों के अनुमोदन के लिए पेश की गई हो तो उसमें स्पष्टता का थोड़ा–बहुत अभाव रहता ही है। मैंने इस लेख में मदद करने के कर्त्तव्यों की सबसे उदार व्याख्या पेश की है। अर्थात् मैंने इस बात का ख्याल रखा है कि इसके लेखकों के मन में कौन सी सबसे अच्छी व्याख्या रही होगी। लेकिन उनके विचारों के बारे में मेरा यह अनुमान गलत भी हो जाता है, तो भी इस लेख में मेरे द्वारा दिए गए तर्क में कोई बदलाव नहीं होता है। यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि हमें इस बात का अंदाजा हो कि मदद करने के कर्त्तव्यों की श्रेणी को जोड़ने के पीछे किस तरह की तात्विक सोच थी। जेनरल कॉमेंट 12, सुपरा नोट 8.

[17] 'कर्त्तव्यों की लहर' (waves of dutes) का इस तरह का वर्णन जेरमी वाल्ड्रॉन के द्वारा सुझाया गया। देखें जेरमी वाल्ड्रॉन, *राइट्स इन कॉन्फ्लिक्ट*, 99 एथिक्स 503 और 510 में। बाद में, 1996 में हेनरी श्यू ने इस विचार को आगे बढ़ाया। देखें हेनरी श्यू, *बेसिक राइट्स*, सुपरा नोट 6, 156 में। लेकिन दोनों ही लेखकों को इस बात का अंदाजा था कि मानवाधिकारों के पूरा होने में संस्थात्मक व्यवस्थाओं की रूपरेखा और सुधार पर ध्यान

मानवाधिकारों के घाटे (deficits) के पूरी तरह से अंत:क्रियात्मक विश्लेषण को संस्थात्मक विश्लेषण से जोड़ा जाना चाहिए। संस्थात्मक विश्लेषण में मानवाधिकारों के घाटे (या उल्लंघन) को व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के गलत आचरण में ढूंढ़ा जाता है। इसकी बजाय, सामाजिक संस्थाओं की रूपरेखा में मौजूद अन्यायों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसमें समाजों और अन्य सामाजिक व्यवस्थाओं को संरचना देने और उन्हें संगठित करने वाली नियम, प्रक्रियाओं तथा एजेंसियों पर ध्यान दिया जाता है। अमूमन ये दो तरह के विश्लेषण एक-दूसरे के अनुपूरक होते हैं। इस तरह, दासता का हर उदाहरण में एक या एक से ज्यादा व्यक्ति जिम्मेदार होते हैं। ये व्यक्ति (हिंसा या डरा-धमकाकर) किसी दूसरे मनुष्य को अपने प्रभुत्व के अंदर रखते हैं। अन्यायपूर्ण सामाजिक संस्थाओं के कारण व्यापक रूप से दासता कायम रहती है। इस तरह की सामाजिक संस्थाओं में (बुरे पुराने दिनों में) यह स्वीकार किया गया था कि व्यक्तियों पर किसी अन्य व्यक्ति का संपत्ति अधिकार हो सकता है; और (तथाकथित प्रबोधनकालीन वर्तमान में) जीवन को खतरा उत्पन्न करने वाली गरीबी उभर कर सामने आ रही है। इसके अलावा, राष्ट्रीय आपराधिक न्याय व्यवस्थाओं द्वारा 'पहली दुनिया' के बाहर के गरीब विदेशी लोगों के मानवाधिकारों को प्रभावकारी तरीके से मान्यता नहीं दी जा रही है।[18] इसी तरह से, हर वैवाहिक बलात्कार (marital rape) पति द्वारा किया गया नैतिक जुर्म है; और बड़े पैमाने पर होने वाले वैवाहिक बलात्कार (marital rape)

देने की जरूरत है। श्यू कर्त्तव्यों की एक ऐसी श्रेणी तैयार करते हैं, जो ऐसी संस्थाओं को तैयार करता है जिसमें लोगों को वंचना से बचाए जाए। ये संस्थाएँ दूसरे लोगों को वंचित कर फायदा पाने की प्रवृति को कम-से-कम करने का प्रयास करती हैं। आगे की विवेचना के लिए देखें थॉमस पोगे, *श्यू ऑन राइट्स एंड ड्युटीज*, संकलित ग्लोबल बेसिक राइट्स 113 (चार्ल्स बिट्ज एंड रॉबर्ट गूडिन संपादित, 2009); केरेन डान्गेयू (Kieran Donaghue), *ह्युमन राइट्स, डेवलपमेंट्स, आइनजीओज, एंड प्रॉयोरटीज फॉर एक्शन*, संकलित, एथिक्ल क्वेश्चन्स एंड इंटरनेशनल एनजीओज: एन एक्सचेंज बिटविन फिलॉसफर्स एंड एनजीओज 39 (कीथ हॉर्टन और क्रिस रोके ख्तवंबीम, संपादित, 2010)

[18] वर्तमान समय में दासों का ठीक-ठीक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। लेकिन सामान्यत: यह अनुमान लगाया जाता है कि पूरी दुनिया में तकरीबन 27 मिलियन दास हैं। 'पिछले चार सदियों के दौरान ट्राँस-अटलांटिक दास व्यापार में जितने अफ्रीकी दासों का व्यापार किया गया था, वर्तमान समय में उससे भी ज्यादा दास मौजूद हैं। आधुनिक वाणिज्य में मनुष्यों का प्रयोग गैरकानूनी रूप से ड्रग्स के वैश्विक विस्तार की तरह ही है- और इसने जिंदगी को नष्ट किया है।' (एक बार देखना है)। एंड्रउ कोकबर्न, 21 सेंचुरी सेल्वस, नेशनल ज्योग्रॉफिक (सितम्बर 2003), gttp://ngm.nationalgeoraphic.com/ngm/0309/feature1/

यह दिखाते हैं कि कानून बनाने में, पुलिस और न्यायिक अधिकारियों के प्रशिक्षण में बहुत ज्यादा संस्थात्मक अन्याय मौजूद है।

इस तरह के अनुपूरकता के उदाहरणों के विपरीत कुछ ऐसे भी मामले हैं जहाँ संस्थात्मक विश्लेषण अंत:क्रियात्मक विश्लेषण से आगे जाता है। इस कारण, जहाँ पूरी तरह से अंत:क्रियात्मक विश्लेषण कई बार अस्पष्ट रहता है, वहीं संस्थात्मक विश्लेषण मानवाधिकारों के घाटे (या उल्लंघन के संबंध में ज्यादा बुद्धिमता से भरी प्रतिक्रियाएँ पेश करता है। गरीबी इसका एक उदाहरण है। जब लोग इतने गरीब होते हैं कि वे अपनी बुनियादी जरूरतों को भी पूरा नहीं कर पाते हैं, तो ऐसे में कई मरतबा ऐसे विशिष्ट अन्य लोग होते हैं जो यह गरीबी उत्पन्न करते हैं। मान लीजिए कि लोगों के भूखे रहने का कारण यह है कि बाजार में खाने के सामान की कीमत बढ़ गई है। खाने के सामान की कीमत बढ़ने का कारण यह है कि एक बहुत बड़े भूमि-पति (landowner) ने यह फैसला किया है कि वह खाद्य वस्तुओं की जगह एथनॉल (ethnaal) उपजाएगा; इसका कारण यह भी हो सकता है कि भ्रष्ट नेताओं ने गरीब किसानों को उनकी जमीन से बेदखल कर दिया हो, ताकि वे वहाँ कैसीनों या शॉपिंग सेंटर बना सके। इसमें मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं को उपलब्ध कराने में नाकाम रहना भी एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है। लेकिन इस संदर्भ में सबसे विशिष्ट बात यह है कि यह भूख व्यवस्थित है। यह एक खास आर्थिक व्यवस्था के संदर्भ में उत्पन्न हुआ है। इसमें बाजार की कई ऐसी ताकतें सक्रिय होती हैं जो यह उनके फैसलों का विशिष्ट व्यक्तियों पर या सभी गरीबों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। यह बात पूरी तरह से स्पष्ट है कि पति को अपनी पत्नी की शारीरिक सुरक्षा के मानवाधिकार का सम्मान करने के लिए क्या करना चाहिए। लेकिन यह बात स्पष्ट नहीं है कि दूसरे लोगों के पर्याप्त जीवन-स्तर पाने के मानवाधिकार की इज्जत करने के लिए बाजार में भागीदारी करने वाले लोगों को किस तरह का कदम उठाना चाहिए। यह मानवाधिकार उपयुक्त सामाजिक आर्थिक संस्थाओं के द्वारा ही सबसे

अच्छी तरह से हासिल किया जा सकता है। जिन देशों में इन अधिकारों को हासिल किया गया है, वहाँ समुचित संस्थात्मक व्यवस्था के द्वारा ही ऐसा किया गया है।[19]

यह एक तथ्य है कि बहुत पहले से ही संस्थात्मक विश्लेषण में नैतिक उद्देश्य को भी जोड़ा जाता रहा है।[20] लेकिन इसका हालिया उदाहरण जॉन रॉल्स की महान किताब *अ थियरी ऑफ जस्टिस* है।[21] इस किताब एक राष्ट्री समाज के नागरिकों को मानकीय संदेश दिया गया है। इसमें आधुनिक परिस्थितियों के अंतर्गत मौजूद सामाजिक संस्थाओं और खासतौर पर राष्ट्रीय समाज की बुनियादी संरचना पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसमें इन समाजों के नागरिकों के 'न्याय के स्वाभाविक कर्त्तव्य' की व्याख्या की गई है। इस संदर्भ में रॉल्स का यह मानना है कि '(न्याय का स्वाभाविक कर्त्तव्य) हमसे यह माँग करता है कि हम अस्तित्वमान और अपने ऊपर लागू होने वाली न्यायपूर्ण संस्थाओं का समर्थन करें और उनके नियमों का अनुपालन करें...(और) ऐसी न्यायपूर्ण व्यवस्था को बढ़वा दें जो अभी तक स्थापित नहीं हुई है।'[22] रॉल्स द्वारा न्याय के इस तरह के स्वाभाविक कर्त्तव्य के लिए दिया जाने वाला तर्क महत्वपूर्ण है क्योंकि यह इस बात को स्पष्ट करता है कि किस तरह एक समाज के सदस्य संस्थात्मक रूप से सामाजिक-आर्थिक वंचनाओं और असमानता का मुकाबला कर सकते हैं। इस तर्क के द्वारा रॉल्स यह बताते हैं कि ऐसा उस स्थिति में भी किया जा सकता है जब सुरक्षा करने या उपलब्ध कराने जैसे व्यक्तिगत प्रयासों के द्वारा इस तरह की वंचनाओं या असमानता का प्रभावकारी तरीके से मुकाबला करना नामुमकिन हो। लेकिन (मेरा यह मानना है) कि रॉल्स द्वारा दिए जाने वाले इस तर्क में बहुत ही गंभीर कमी है। रॉल्स का यह मानना सही नहीं है कि नागरिक जिन सामाजिक संस्थाओं की रूपरेखा तैयार करते हैं या जिनके अनुसार जिंदगी जीते हैं, उन संस्थाओं के संदर्भ में उनका सिर्फ सकारात्मक कर्त्तव्य

---

[19] यहाँ 'हासिल करना' (realize) शब्द का उपयोग 'हर किसी के लिए पूरा करने' (fulfill for all) के अर्थ में किया गया है। एक मानवाधिकार किसी खास क्षेत्राधिकार में या पूरी दुनिया में हासिल किया जाता है, यदि इस क्षेत्राधिकार या पूरी दुनिया में रहने वाले लोगों को इस मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुएँ मिली हुई हों।

[20] इस संदर्भ में एंग्लोफोन विवेचना में यह किताब एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है: *जेरमी बेंथम, एन इंट्रोडक्शन टू द प्रिंसिपल्स ऑफ मॉरल्स एंड लेजिस्लेशन* (जे.एच. बर्न्स और एच. एल. ए. हार्ट संपादित, क्लेरेण्डन प्रेस 1996) (1789)

[21] जॉन रॉल्स, *अ थियरी ऑफ जस्टिस* (1971)

[22] वही, पृष्ठ 115; साथ ही देखें पृ. 334, 246.

होता है। इस संदर्भ में विस्तृत विवेचना करते हुए रॉल्स यह स्पष्ट करते हैं कि संस्थाओं की रूपरेखा तैयार करने से संबंधित हमारे स्वाभाविक कर्त्तव्य सकारात्मक कर्त्तव्य होते हैं। रॉल्स इन्हें पारस्परिक सहायता या पारस्परिक सम्मान जैसे अन्य सकारात्मक कर्त्तव्यों से जोड़ते हैं। वे यह मानते हैं कि ये निर्दोष लोगों को नुकसान न पहुँचाने जैसे नकारात्मक कर्त्तव्यों से अलग हैं।[23] यदि नागरिकों का अपने सहभागी सामाजिक संस्थाओं की न्याय पर नजर रखने का कर्त्तव्य एक सकारात्मक कर्त्तव्य है, तो यह कम महत्वपूर्ण है। दरअसल, रॉल्स भी इस व्यापक रूप से स्वीकृत मान्यता को दुहराते हैं कि 'जब अंतर बहुत ही स्पष्ट हो तो सकारात्मक कर्त्तव्यों की तुलना में नकारात्मक कर्त्तव्यों में ज्यादा वजन होता है।'[24]

रॉल्स के बाद लिखने वाले राजनीतिक चिंतकों और न्यायविदों ने उनके इस विचार को पूरी तरह स्वीकार किया है कि सामाजिक संस्थाओं के न्याय के जिम्मेदारी एक सकारात्मक जिम्मेदारी है। ये चिंतक और न्यायविद् इस बात को मान्यता नहीं देते हैं कि इस नजरिए को अपनाने या शामिल करने से कुछ विवादास्पद नतीजे सामने आते हैं। बहरहाल, इनके द्वारा इस जिम्मेदारी को पूरी तरह सकारात्मक नजरिए से देखने के कारण इसे अब जगह सकारात्मक रूप से देखा जाता है। जेनरल कॉमेंट 12 में यह माँग की गई है कि 'राज्य को निश्चित तौर पर ऐसी गतिविधियाँ करनी चाहिए जिससे लोगों की ऐसे संसाधनों और साधनों तक पहुँच बढ़े जो उनकी जीविका- जिसमें खाद्य सुरक्षा भी शामिल है- को सुनिश्चित करे। सरकार को यह भी कोशिश करनी चाहिए कि लोग इन संसाधनों और साधनों का उपयोग करने में समर्थ हो पाएँ।'[25] और हेनरी श्यू का जटिल सूत्रीकरण भी सकारात्मक रूप में ही सामने आता है। इसमें ऐसी संस्थाओं के निर्माण की प्रासंगिक जिम्मेदारी की बात की जाती है, जिनमें लोगों को यह बिल्कुल न लगे कि मानवाधिकारों का उल्लंघन करने पर वे फायदे की स्थिति में रहेंगे। इसमें यह नहीं कहा जाता है कि हमें एसी सामाजिक संस्थाओं को नहीं बनाना है या उन्हें कायम नहीं रखना है जो मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए मजबूत प्रेरणा प्रदान करें।

---

[23] वही, पृ. 109.

[24] वही, पृ. 114.

[25] जेनरल कॉमेंट 12, नोट 8.

यहाँ कर्त्तव्य के दायरे (scope) के साथ समस्या नहीं है: रॉल्स और उनके बाद के चिंतक नागरिकों को कुछ ऐसा करने के लिए कहते हैं जो उन्हें करना चाहिए। मुख्य समस्या कर्त्तव्य के चरित्र और इसे दिए जाने वाले वजन में निहित है। अब यह दृष्टिकोण एक पारंपरिक दृष्टिकोण (conventional view) बन चुका है कि एक समाज की सामाजिक संस्थाओं का इसके सदस्यों की जिंदगी पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है; इसलिए सरकारों और नागरिकता को इन संस्थाओं का बेहतर बनाना चाहिए जिससे वे अपने न्याय (रॉल्स) या अधिकारों की पूरी तरह पाने (श्यू) को बढ़ावा दे सकें। लेकिन सामाजिक संस्थाओं की न्याय को बेहतर बनाने में मदद करने का विचार किसी व्यक्ति के अपने समाज की संस्थाओं और दूसरे समाज की संस्थाओं के बीच कोई अंतर नहीं करता है। इस विचार के अनुसार एक तुर्की महिला का यह दायित्व है कि वह तुर्की की सामाजिक संस्थाओं में न्याय को बढ़ावा दे। उसका यह दायित्व पराग्वे की सामाजिक संस्थाओं में न्याय को बढ़ावा देने के उसके दायित्व के बराबर है। निश्चित रूप से, अमूमन यह बात सच साबित होगी कि नागरिक उस स्थिति में ज्यादा प्रभावकारी होंगे जब वे अपने समय और संसाधनों का उपयोग अपने समाज की संस्थओं को सुधारने के लिए करेंगे। यह ठीक ऐसा ही है कि जब कोई व्यक्ति किसी विदेशी की जगह अपने देश के लोगों की मदद करता है, तो वह ज्यादा प्रभावकारी तरीके से यह काम करता है। बहुत सारे लोग इसमें यह बात जोड़ना चाहेंगे कि व्यक्ति का दूसरे लोगों की मदद करने का सकारात्मक कर्त्तव्य ज्यादा मजबूत रूप से उन लोगों के से जुड़ा होता है जो सांस्कृतिक रूप से या भौगोलिक रूप से उनके नजदीक होते हैं। इसका मतलब यह है यदि दोनों ही संदर्भों में मदद करने का लागत प्रभाव बराबर हो, तो भी किसी व्यक्ति का नैतिक दायित्व है कि वह दूर रहने वाले अनजान लोगों की तुलना में अपने देश के लोगों की मदद करे। इस संदर्भ में इस तर्क में भी बहुत नैतिक वजन होता है कि उसे किसी दूर के समाज में संस्थात्मक न्याय को बढ़ावा देने की बजाय (जिससे दूर बैठे कुछ अनजान लोगों को फायदा होगा) अपने समाज में संस्थात्मक न्याय को बढ़ावा देना चाहिए (इससे उसके देश के कुछ लोगों को फायदा होगा)। इन दो चिंताओं को स्वीकार करते हुए पारंपरिक दृष्टिकोण इस सामान्य विचार की पुष्टि कर सकता है कि तुर्की की तुलना में पराग्वे की सामाजिक संस्थाओं में न्याय को बढ़ावा देने के ज्यादा सस्ता होने के बावजूद तुर्की के लोगों को अमूमन यह कोशिश करनी चाहिए कि वे तुर्की की सामाजिक संस्थाओं में ही सामाजिक न्याय को बढ़ावा दें।

इस तरह के विचार की आलोचना की जा सकती है। लेकिन मैं यहाँ इसकी तारीफ करना चाहता हूँ। इस बिंदु की शुरूआत एक नाटकीय सादृश्यता (dramatic analogy) से की जा सकती है। मान लीजिए कि कोई ड्राइवर गाड़ी चलाते हुए कहीं जा रहा है। अचानक उसे रोड़ के किनारे एक बच्चा मिलता है जो बहुत ज्यादा घायल है। चूंकि ड्राइवर इसी इलाके का रहने वाला है, इसलिए वह इस इलाके को बहुत अच्छी तरह जानता है। खासतौर पर उसे यह पता है कि वह जल्द-से-जल्द बच्चे को सबसे नजदीकी अस्पताल के इमरजेंसी वार्ड में लेकर कैसे जा सकता है। ड्राइवर यह देखता है कि बच्चे के शरीर से बहुत ज्यादा खून निकल रहा है। इसलिए यदि वह उसे अस्पताल नहीं ले गया तो बच्चे की जान को खतरा हो सकता है। बच्चे से थोड़ी-बहुत बातचीत कर लेने के बाद उसे यह भी पता चल जाता है कि वह नजदीक के किसी इलाके में ही रहता है। इस तरह यह बच्चा सांस्कृतिक रूप से और भौगोलिक रूप से ड्राइवर के बहुत करीब है। इन सब तथ्यों को देखते हुए मनुष्यों की मदद करने का उसका कर्त्तव्य उसे यह सख्त दायित्व देता है कि वह बच्चे को जल्द-से-जल्द सुरक्षित अस्पताल पहुँचा दे।

अब इस कहानी में कुछ और बातें भी जोड़ते हैं। दरअसल, खुद ड्राइवर ने ही इस बच्चे की यह हालत की है। जब वह गाड़ी चला रही था तो वह बच्चा सड़क पार कर रहा था। लेकिन यह ड्राइवर अपने सेल फोन पर बात करने में इतना मशगूल था कि वह संतुलन नहीं बना पाया और उसने बच्चे का धक्का दे दिया। इस नई सूचना से इस पुराने नतीजे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है कि उसका यह गंभीर दायित्व है कि वह बच्चे को जल्द-से-जल्द अस्पताल पहुँचाए। लेकिन अब इस नतीजे पर एक ज्यादा वजनदार नैतिक तर्क की छाया पड़ गई है। यदि अस्पताल पहुँचने से पहले ही बच्चे की मौत हो जाती है तो क्या होगा। ऐसी स्थिति में यह माना जाएगा कि उसने बच्चे की हत्या की है (यानी सिर्फ उसे चोट नहीं पहुँचाई है)। उसका यह नकारात्मक कर्त्तव्य है कि वह किसी की हत्या न करे। यह कर्त्तव्य एक ज्यादा सख्त दायित्व को जन्म देता है, जिसकी अंतर्वस्तु (content) पहले के दायित्व की तरह ही है: उसे इस बच्चे को जल्द-से-जल्द और सुरक्षित अस्पताल पहुँचाना चाहिए।

यहाँ मुख्य सादृश्य बिंदु (point of the analogy) यह है कि किसी समाज के नागरिकों की उस समाज की सामाजिक संस्थाओं को ज्यादा न्यायपूर्ण बनाने के संदर्भ में दो तरह के दायित्व होते हैं।

इनमें से एक उनके इस बहुत ही सामान्य सकारात्मक कर्त्तव्य से उत्पन्न होता है कि उसे कहीं भी मनुष्यों के अधिकारों की हिफाजत और उनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए सामाजिक संस्थाओं के न्याय को बढ़ावा देना चाहिए। एक अन्य दायित्व उनके इस नकारात्मक कर्त्तव्य से उत्पन्न होता है कि उन्हें दूसरे लोगों के लिए अन्यायपूर्ण सामाजिक संस्थाओं को बनाने या थोपने में शामिल नहीं होना चाहिए। किसी नागरिक के अपने समाज के संदर्भ में इन दो दायित्वों की अंतर्वस्तु (content) बुनियादी रूप से इसी तरह की होती है। लेकिन इन सख्ती या कठोरता (stringency) में अंतर होता है। यह अपने-आप में बहुत बुरी बात होगी कि कोई व्यक्ति किसी अन्याय को सिर्फ इससे लिए कायम रहने दे कि इससे उसे फायदा होता है। मान लीजिए कि मैं इस पूरी प्रक्रिया से बाहर रहने वाला एक मूकदर्शक हूँ; और अन्याय को कायम रहने देता हूँ तो मैं फायदे पाने वाले व्यक्ति की तुलना में कम बुरा काम कर रहा हूँ। यदि इस अन्याय के कारण मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है तो पहले मामले (यानी फायदे पाने वाले मामले में) व्यक्ति मानवाधिकारों के उल्लंघन का दोषी होता है, लेकिन दूसरे मामले में ऐसा नहीं होता है। और यह इस बात के लिए एक अलग, मजबूत और गैर-यांत्रिक तर्क पेश करता है कि तुर्की के नागरिकों को पराग्वे की बजाय तुर्की में राजनीतिक सुधार करने पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। मान लीजिए कि तुर्की इस तरह संगठित है कि वहाँ के कुर्दीश अल्पसंख्यकों के मानवाधिकारों को व्यापक रूप से पूरा नहीं किया जाता है, तो तुर्की के नागरिक भी मानवाधिकारों के उल्लंघन में सहभागी हैं। इसके विपरीत, यदि पराग्वे में वहाँ के मूल निवासियों के मानवाधिकारों की व्यापक रूप से उपेक्षा होती है तो इन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।[26]

जेनरल कॉमेंट 12 में इस बात को सही ही मान्यता दी गई है कि मानवाधिकारों के पूरा होने में सामाजिक संस्थाओं की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मदद करने के कर्त्तव्यों (duties to facilitate) को एक अलग श्रेणी बनाकर इस बात को मान्यता देना भी महत्वपूर्ण है कि सामाजिक संस्थाओं के निमार्ण में व्यक्तियों की बहुत ही महत्वपूर्ण कर्त्तव्य होते हैं। बहरहाल, यहाँ कर्त्तव्यों

[26] मैं यहाँ इस संभावना को छोड़ दे रहा हूँ कि तुर्की की सरकार के द्वारा यहाँ के नागरिकों को फँसाया जा सकता है। यानी तुर्की की सरकार यह तर्क दे सकती है कि उन्होंने भी ऐसे परा-राष्ट्रीय (suranational) राष्ट्रीय संस्थाओं को बनाने में योगदान दिया है, जिनके कारण पराग्वे में मानवाधिकारों की उपेक्षा की जा रही है। भाग III में इस संभावना पर विस्तार से विचार किया गया है।

की एक अन्य श्रेणी भी जोड़ी जानी चाहिए। इसमें यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि लोग ऐसी संस्थाओं के बनाने या थोपे जाने में कोई सहयोग न दें जिनसे मानवाधिकारों के पूरा न होने की संभावना हो। ये कर्त्तव्य मदद करने के कर्त्तव्यों (duties to facilitate) के नजदीक हैं क्योंकि इन दोनों में ही सामाजिक संस्थाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसके अलावा, इन दोनों में ही इस बात पर जोर दिया जाता है कि संस्थात्मक सुधार के द्वारा मानवाधिकारों के घाटे (या उल्लंघन) को कम-से-कम किया जाना चाहिए। ये इस अर्थ में सम्मान देने के कर्त्तव्य के नजदीक हैं कि बुनियादी रूप से इनका चरित्र भी नकारात्मक ही है: सम्मान देने के कर्त्तव्य या सहयोग न करने के कर्त्तव्य की अवहेलना करके ही कोई मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाला बन सकता है।

द. एक तुलनात्मक विधेय के रूप में मानवाधिकारों का उल्लंघन और मदद करने का कर्त्तव्य (Human Rights violation as a Relational Prediacte and the Duty to Facilitate)

ऊपर की विवेचना से यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि मानवाधिकारों के उल्लंघन की अवधारणा एक तुलनात्मक विधेय (relational predicate) है। इसमें व्यक्तियों के अपूर्ण मानवाधिकारों के संबंध में विशिष्ट व्यक्तियों (या कर्त्ताओं) के कुछ खास दायित्व होते हैं। मान लीजिए कि पराग्वे के मूल निवासियों (indegenous people) की जनसंख्या में से अधिकांश लोगों के पास सही जीवन स्तर नहीं है। फिर यदि पराग्वे के अभिजनों ने अन्यायपूर्ण सामाजिक संस्थाओं को लागू करने में मदद की हो, या वे अपने यहाँ काम करने वाले मूल निवासी नौकरों आदि के साथ बुरा बरताव करते हों, तो यह माना जाएगा कि वे मानवाधिकारों के उल्लंघन में शामिल हैं। लेकिन इसे तुर्की के अमीर लोगों के द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं माना जाएगा। तुर्की के ये लोग पराग्वे के मूल निवासियों के मानवाधिकारों की सुरक्षा करने, उसके लिए जरूरी वस्तुओं को उपलब्ध कराने या मदद करने (facilitae) का काम कर सकते थे। लेकिन यदि वे ऐसा नहीं करते हैं तो भी उन्हें मानवाधिकारों के उल्लंघन का दोषी नहीं माना जाएगा। इसका कारण यह है कि ये पराग्वे के मूल निवासियों के साथ बुरा बरताव नहीं कर रहे हैं। इसके अलावा, पराग्वे में मौजूद अन्यायपूर्ण सामाजिक संस्थाओं के निर्माण में इनकी कोई भूमिका नहीं

रही है। इसी तरह, पराग्वे के मूल निवासियों के मानवाधिकारों के इस उल्लंघन के बारे में यह नहीं कहा जा सकता है कि यह स्थिति इसलिए है क्योंकि सियरा लिओन में वंचित स्थिति में रहने वाले नागरिकों ने मानवाधिकारों के संबंध में अपने कर्त्तव्य की अवहेलना की है। दरअसल, सियरा लिओन के ये लोग पराग्वे के मूल निवासियों की स्थिति को सुधारने में पूरी तरह से असमर्थ हैं। इस संदर्भ में यह भी नहीं कहा जा सकता है कि पराग्वे के मूल निवासियों ने अपने कर्त्तव्य की अवहेलना की है। दरअसल, इनसे यह नहीं कहा जा सकता है कि वे अपने और अन्य मूल निवासियों के मानवाधिकारो के लिए राजनीतिक कार्रवाई करें क्योंकि इस तरह की कार्रवाई उनके लिए बहुत खतरनाक हो सकती है।

यहाँ मानवाधिकारों के उल्लंघन की अवधारणा के बारे में दो मुख्य बातें उभरकर सामने आती हैं। पहला, इस अवधारणा में मानवाधिकारों के पूरा न होने के सभी मामलों को शामिल कर इसका व्यापक अर्थ में प्रयोग करने की प्रवृत्ति का विरोध किया जाना चाहिए। यदि मुमकिन हो तो इस अभिव्यक्ति को राजनीतिक उपदेशकों और मीडिया से बचाकर रखा जाना चाहिए। ये हमेशा यह दिखाने की कोशिश करते हैं कि बाकी लोगों की तुलना में वे मानवाधिकारों की सबसे ज्यादा चिंता करते हैं। मानवाधिकारों का उल्लंघन शहर के नष्ट होने जैसी सनसनीखेज घटना नहीं है। यह पर्याप्त सुरक्षा या मदद देने में आपराधिक नामाकी भी नहीं है। मानवाधिकारों का उल्लंघन विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला सक्रिय अपराध है। इन लोगों को पहचाना जाना चाहिए और इन पर अपने काम करने के तरीके में बदलाव करने के लिए दबाव डाला जाना चाहिए या फिर इन पर रोक लगाई जानी चाहिए।

दूसरा बिंदु यह है कि मानवाधिकारों का उल्लंघन दो रूपों में सामने आता है। इसमें से एक की उपेक्षा की गई (और इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है)। इसका एक रूप अंत:क्रियात्मक है। इसमें लोग व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से ऐस काम करते हैं जिससे दूसरे लोगों की मानवाधिकार की वस्तुओं से वंचित होते हैं। इन लोगों का इस बात का पता होता है कि उनकी गतिविधियों से इस तरह के नतीजे सामने आ सकते हैं। कई मरतबा वे इसी मकसद से इस तरह का काम करते हैं। इसके अलावा, मानवाधिकारों के उल्लंघन का एक संस्थात्मक रूप भी है। इसमें लोग ऐसी संस्थात्मक व्यवस्थाएँ बनाते और लागू करते हैं जिससे मनुष्यों को मानवाधिकार के लिए

आवश्यक वस्तुएँ नहीं मिल पाती हैं। इस तरह की संस्थाओं को बनाने वाले लोगों को इस तरह के नतीजों के बारे में पता होता है; कई मौकों पर वे ऐसा नतीजा हासिल करने के लिए ही इस तरह की संस्थात्मक व्यवस्था करते हैं।[27] मानवाधिकारों के उल्लंघन के इस संस्थात्मक रूप की बहुत से लेखकों ने उपेक्षा की है। ये वे लेखक हैं जिन्हें न्याय और मानवाधिकारों के बारे में सिद्धांत तैयार करने के लिए विशेष सुविधा मिली हुई है। यदि ये संस्थात्मक रूप से मानवाधिकारों के उल्लंघन की बात को स्वीकार करते हैं तो मानवता के खिलाफ व्यापक पैमाने पर होने वाला अपराध पूरी तरह से उभरकर सामने आ जाएगा। यह ऐसा अपराध है जिसमें ये सिद्धांतकार और इनके पाठक– दोनों ही शामिल हैं। अन्यायपूर्ण परा–राष्ट्रीय (transnational) संस्थाओं द्वारा किए जाने वाला इस तरह का अपराध दुनिया में आधी से ज्यादा गरीबी के लिए जिम्मेदार है। इस तरह, वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों के घाटे में इसका सबसे ज्यादा योगदान है।

मानकीय सिद्धांतकारों ने जानबूझकर या अनजाने में, मुख्य रूप से दो तरह से इस अपराध को धुंधला या हल्का बनाया है। पारंपरिक दृष्टिकोण यह रहा है कि राष्ट्रीय सीमाओं को नैतिक रूप से पवित्र (moral watershed) माना जाता है। इसमें इस बात पर जोर दिया जाता है कि हर राज्य अपनी सीमाओं के भीतर मानवाधिकारों को पूरा करने के लिए जिम्मेदार है। इस संदर्भ में

---

[27] मैंने अपनी किताब थॉमस पोगे, *वर्ल्ड पोवर्टी एंड ह्युमन राइट्सः कॉस्मोपॉलिटन रिसपांसिबिलिटीज एंड रिफार्म्स*, (2002) के अध्याय 2 में मानवाधिकारों की संस्थात्मक समझ का विकास किया है। लेकिन दुर्भाग्य से मैंने अपने तर्क को कुछ ज्यादा ही बढ़ा–चढ़ाकर पेश कर दिया था। मेरे तर्क में इस विचार की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका थी कि व्यक्ति संस्थात्मक व्यवस्थाओं के निर्माण में योगदान देकर दूसरे मनुष्यों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर सकते हैं। यानी वे ऐसी संस्थात्मक व्यवस्था बनाने में मदद कर सकते हैं जिसमें लोगों के मानवाधिकारों स्पष्ट उल्लंघन की संभावना हो। यह विचार आधुनिक दौर में बहुत से मानवाधिकारों के उल्लंघन की जवाबदेही तय करने के लिए जरूरी था। लेकिन मुझे मानवाधिकारों की अंतःक्रियात्मक समझ (interactional understaing) को पूरी तरह खारिज नहीं करना चाहिए था। ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं थी। मुझे यह स्वीकार करना चाहिए था कि संस्थात्मक व्यवस्थाओं में योगदान देने के अलावा दूसरे तरीकों से भी व्यक्ति मानवाधिकारों का उल्लंघन करते हैं। मैंने इस गलती को स्वीकार किया है। मैंने इस किताब पर आयोजित एक सिम्पोसियम में रॉवन क्रुफ्ट (Rowen Cruft) को दी गई प्रतिक्रिया में इसके लिए माफी माँगी है। 2008 में *वर्ल्ड पोवर्टी एंड ह्युमन राइट्स* का दूसरा और विस्तृत संस्करण प्रकाशित हुआ है, जिसमें इस गलती को सुधार दिया गया है।

विदेशियों की जिम्मेदारी बहुत ही कम है। ज्यादा-से-ज्यादा यह कहा सकता है कि उनका यह सकारात्मक कर्त्तव्य होता है कि वे सहायता करें।[28]

इस पारंपरिक दृष्टिकोण के विकल्प के रूप में जो दृष्टिकोण सामने आया है उसे समकालीन दृष्टिकोण कहा जा सकता है। इसके उभार और सफलता में वैश्वीकरण की परिघटना की बहुत ही महत्वपूर्ण रही है। इसने अंत:क्रियात्मक संबंधों (interactioal relations) के पारंपरिक दायरे में बदलाव किया है। वैश्वीकरण का एक मुख्य घटक यह रहा है कि इसने नियमों की एक बहुत ही सघन और प्रभावकारी वैश्विक व्यवस्था उत्पन्न की है। इसके अलावा, बहुत से नए अंतर्राष्ट्रीय, परा-राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कर्त्ता भी उभरकर सामने आए हैं। इन परा-राष्ट्रीय नियमों और कर्त्ताओं ने राष्ट्रीय समाजों के घरेलू जिंदगी में (खासतौर पर गरीबों के बीच) बहुत गहरी पैठ बना ली है। इसने विभिन्न राज्यों के बीच की अंत:क्रिया को ही नहीं बढ़ाया है, बल्कि घरेलू स्तर पर अंत:क्रिया को भी बढ़ावा दिया है। पूरी दुनिया में इन परा-राष्ट्रीय नियमों और कर्त्ताओं का बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ा है। अब यह कहना बिल्कुल ही बेमतलब है कि नैतिकता से मुक्त कोई ऐसा क्षेत्र भी है जहाँ न्याय की अवधारणा लागू नहीं होती है।[29] इसलिए समकालीन दृष्टिकोण ने मानवाधिकारों को हासिल करने में मदद करने के कर्त्तव्य (duty to facilitate) को मान्यता देकर एक बहुत अच्छा काम किया है। अर्थात् पहले से यह माना जाता रहा है कि व्यक्तियों का यह सकारात्मक कर्त्तव्य है कि मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं की सुरक्षा करें या उन्हें उपलब्ध कराएँ। अब उन्हें एक अतिरिक्त कर्त्तव्य भी दिया गया है- यानी अब उन्हें संस्थात्मक व्यवस्थाओं में सुधार के द्वारा मानवाधिकारों की प्राप्ति को बढ़ावा देना है। अन्य दो सकारात्मक कर्त्तव्यों की तरह ही इस नए दृष्टिकोण भी 'अपूर्ण' माना जाता है। यह इस कर्त्तव्य को धारण करने वाले लोगों का यह असीमित विशेषाधिकार देता है कि वे क्या और कितना करेंगे। इस संदर्भ में विश्व खाद्य सुरक्षा के संदर्भ में रोम घोषणा-पत्र के बारे में संयुक्त राज्य अमेरीका द्वारा दिया गया 'व्याख्यात्मक बयान' बहुत ही रोचक और आँखे खोल देने वाला है। अपने बयान में

---

[28] रॉल्स इस तरह के पारंपरिक दृष्टिकोण का एक प्रमुख उदाहरण हैं। उन्होंने सहायता करने के इस तरह के सकारात्मक कर्त्तव्य को मान्यता दी है। देखें, जॉन रॉल्स, *द लॉ ऑफ पीपुल्स*, 37, 106-119 (1999).

[29] थॉमस नैगल द्वारा रॉल्स के संदर्भ में ऐसा किया गया था। देखें थॉमस नैगल, द प्रॉब्लेम ऑफ ग्लोबल जस्टिस, 33 फिल एंड पब्लिक अफेयर्स, नबंर 2, पृ. 2005.

अमेरीका ने यह स्पष्ट किया कि '''भोजन का अधिकार' या 'भूख से मुक्त रहने का मूल अधिकार' एक ऐसा लक्ष्य या आकंक्षा है जिसे धीरे-धीरे हासिल किया जाना चाहिए और यह किसी अंतर्राष्ट्रीय दायित्व को जन्म नहीं देता है।''[30]

समकालीन दृष्टिकोण इस अर्थ में एक अगले कदम का प्रतिनिधित्व करता है कि यह इस बात को मान्यता देता है कि परा-राष्ट्रीय संस्थाओं को मजबूत करना न तो सामान्य बात है और न ही यह नैतिक रूप से तटस्थ है। समकालीन दृष्टिकोण हमें इन परा-राष्ट्रीय संस्थाओं की व्यवस्था को सुधारने का काम देता है। यह इस जिम्मेदारी को विशिष्ट रूप से सकारात्मक जिम्मेदारी के रूप में पेश करता है। इस तरह, यह पारंपरिक दृष्टिकोण के मुख्य मत को बढ़ावा देता है: इसमें यह माना जाता है कि विदेशी सिर्फ सीमा पार के हिंसक हस्तक्षेप द्वारा ही मानवाधिकारों का उल्लंघन कर सकते हैं। लेकिन समकालीन दृष्टिकोण इस बात को भी मान्यता देता है कि परा-राष्ट्रीय संस्थाओं की हमारी रूपरेखा दुनिया भर में मानवाधिकारों के पूरा होने में महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। लेकिन इसके बावजूद यह इस संभावना को छिपा कर रखता है कि यह परा-राष्ट्रीय व्यवस्था बुनियादी रूप से अन्यायपूर्ण होती है। यह संभावना बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसकी कारण यह है कि यदि परा-राष्ट्रीय संस्थाओं की वर्तमान व्यवस्था बुनियादी रूप से अन्यायपूर्ण है, तो इस संदर्भ में क्रमिक सुधार (progressive improvement) को पर्याप्त नहीं माना जा सकता है। एक ऐसा समय भी था जब लोग दासता में सुधार करने की बात किया करते थे। यह कहा जाता था कि कानून के द्वारा इस तरह बदलाव किया जाना चाहिए कि दासों के साथ मार-पीट न हो, महिला दासों के साथ बलात्कार न हो, उनसे बहुत ज्यादा काम न लिया जाए और उन्हें न्यूनतम भोजन, आवास तथा अवकाश की सुविधा मिले। लेकिन जब दासता को बुनियादी रूप से अन्यायपूर्ण मान लिया गया, तो इसके बारे में एक ही प्रतिक्रिया देना ठीक समझा गया यानी दासता का उन्मूलन किया जाना चाहिए। एक संस्थात्मक अन्याय को किसी व्यक्ति द्वारा किए जाने वाले क्रमिक सुधार से ठीक नहीं किया जा सकता है। इसे तेजी से किए जाने वाले संस्थात्मक सुधारों द्वारा खत्म किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में यह नकारात्मक कर्त्तव्य भी महत्वपूर्ण है कि हमें किसी ऐसी सामाजिक व्यवस्था को बढ़ावा नहीं देना जाना चाहिए जिससे मानवाधिकारों के

---

[30] वर्ल्ड फूड सम्मिट, नवम्बर 13-17, 1996, *रिपोर्ट ऑफ द वर्ल्ड फूड सम्मिट*, यू.एन. डॉक. डब्ल्यूएसएफ96/रेप, एनेक्स प्प, वेब पता http:/www-fao.org/wfs/.

लिए समस्या उत्पन्न होने का खतरा हो। इस संदर्भ में भयंकर गरीबी और दासता एक ही जैसे हैं। मान लीजिए कि ऐसी संस्थाओं को निर्माण संभव है, जो इन वंचनाओं से बच सकते हैं। लेकिन इसके बावजूद यदि ऐसी सामाकि संस्थाओं को स्वीकार किया जाता है जिनमें ये वंचनाएँ शामिल होती हैं, तो इसे उन लोगों के मानवाधिकारों का उल्लंघन माना जाएगा जो दास हैं या बहुत ज्यादा गरीबी का सामना कर रहे हैं।

भाग III हम दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं: अनुभवसिद्ध प्रमाण

भाग प्प में हमने मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण पहलूओं को समझने की कोशिश की। इस पृष्ठभूमि के आधार पर अब हम इस सवाल पर विचार कर सकते हैं कि क्या हम सचमुच दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। इस सवाल का जवाब 'हाँ' है। दुनिया में परा-राष्ट्रीय संस्थाओं का एक ऐसा जाल मौजूद है, जिसके कारण मानवाधिकारों का बहुत ज्यादा घाटा (defecit) पैदा होता है। इस बहुत ज्यादा अन्यायपूर्ण व्यवस्था को लागू करने में हम भी सहयोग देते हैं। इसलिए हम भी दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं।

सेक्शन II द में इस बात को दिखाया गया है कि मानकीय सिद्धांतों में इस नकारात्मक कर्त्तव्य का प्रावधान नहीं किया गया है कि हमें अन्यायपूर्ण संस्थात्मक व्यवस्था के थोपे जाने का समर्थन नहीं करना चाहिए (इसका अर्थ है कि हमें इस तरह के सहयोग को तुरंत बंद करना चाहिए)। इस भाग में यह दिखाया जाएगा कि किस तरह अनुभवसिद्ध सिद्धांतकार (emperical theorists) यह तर्क देते हुए इस अन्याय को कायम रखते हैं कि वैश्वीकरण दुनिया के गरीबों के लिए अच्छा है (सेक्शन अ)। ये यह भी बताते हैं कि आज दुनिया में जो गरीबी है उसके लिए उस समाज के घरेलू कारक जिम्मेदार हैं (सेक्शन ब)। इस भाग के अंत में इस बात पर विचार किया गया है कि वैश्विक गरीबी के वास्तविक कारणों के संदर्भ में क्या किए जाने की जरूरत है (सेक्शन स)।

इस विवेचना को शुरू करने से पहले वर्तमान समय में मानवाधिकारों की स्थिति पर बहुत ही संक्षेप में नजर डालना प्रासंगिक होगा। आज मनुष्यों की कुल जनसंख्या में से आधी से ज्यादा अत्यधिक गरीबी में जीवन गुजार रही है और एक चौथाई आबादी तो इतनी भयंकर गरीबी का सामना कर रही है कि उसके अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है। इस संबंध में आँकड़े इस प्रकार हैं: 925 मिलियन लोग कुपोषण (chronically undernourshid) का शिकार हैं,[31] 884 मिलियन लोगों के पास पीने का साफ पानी नहीं है,[32] 2.5 अरब लोगों की पास साफ-सफाई की व्यवस्था नहीं है,[33] तकरीबन 2 अरब लोगों को बुनियादी दवाईयां भी नहीं मिलती हैं।[34] 1 अरब से ज्यादा लोगों के पास रहने के लिए ठीक-ठाक घर नहीं है,[35] 1.6 अरब लोगों के घर में बिजली नहीं पहुँचती है,[36] 796 मिलियन वयस्क लोग अशिक्षित हैं[37] और 215 मिलियन बच्चे बाल श्रमिक हैं।[38] हर साल तकरीबन 18 मिलियन लोग गरीबी के कारण उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं के चलते मौत का शिकार होते हैं। यह हर दुनिया में होने वाली कुल मौतों का एक तिहाई है।[39]

---

[31] यू.एन. फूड एंड एग्रीकल्चरल ऑर्गनाइजेशन, 925 मिलियन इन क्रॉनिक हंगर वर्ल्डवाइड, सितम्बर 13, 2010, http://www.org/news/story/jp/item/45210/Icate.

[32] प्रेस विज्ञप्ति, यूनिसेफ, यूनिसेफ के नए अध्ययन से यह बात सामने आई है कि सबसे वंचित तबकों के बच्चों पर ध्यान केन्द्रित करके बच्चों तक एमडीजी पहुँचाई जा सकती है (सितम्बर 7, 2010), www.unicef.org/media/media_55913.html.

[33] यूनिसेफ, व्हाट वी डू: वाटर, सैनिटेशन एंड हाइजीन, http://www.unief.org/wash/ (आखिरी बार इसे 6 जुलाई 2010 को अपडेट किया गया).

[34] विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ), डब्ल्यूएचओ मेडीसीन्स स्ट्रेटजी: कंट्रीज एट द केयर-2004-2007, पृ. 3, डब्ल्यूएचओ डॉक. डब्ल्यूएचओ/इडीएम/2004.5 (2004); यह इस वेब पते पर उपलब्ध है- http://aaps.who.int/medicinedocs/pdf/s5416e/s5416e.pdf.

[35] यू.एन. ह्युमन सेटलेमेंट प्रोग्राम, द चैलेंज ऑफ सल्म्स: ग्लोबल रिपोर्ट्स ऑन ह्युमन सेटलमेंट 2003, यू.एन. डॉक एचएस/686/03इ, पृ. XXV, वेब पता- http://www.unhabitat.org/pmss/listltmDetails.aspx/publicationD=1156

[36] यू.एन. हैबिटेट, आवर वर्क: अरबन एनर्जी, http://www.unhabitat.org?content.asp?cid+2884&typeid+24&subMenuld+0 (इसे मैंने आखिरी बार 4 अप्रैल 2011 को देखा).

[37] यूनेस्को इंस्टीट्युट फॉर स्टैटिक्स, लिटेररी टॉपिक, http://www.uis.unesco.org/ev_en.php?ID+DO_TOPIC (आखिरी बार मार्च 29, 2011 को अपडेट किया गया)

[38] इंटरनेशनल लेबर ऑर्गनाइजेशन, टॉपिक: चाइल्ड लेबर,

अ. क्या वैश्वीकरण गरीबों के लिए अच्छा है?

इस दावे पर सवाल खड़ा किया जा सकता है कि हम गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। हम यह तर्क दे सकते हैं कि गरीब लोगों के प्रतिशत में गिरावट हो रही है (इसे सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य या मिलेनियम डेवलपमेंट गोल या एमडीजी 1 के रूप में भी पेश किया जाता है)। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण और इसके साथ आए परा-राष्ट्रीय संस्थाओं की व्यवस्था ने गरीबों के लिए जरूर कुछ अच्छा किया है। लेकिन इस तर्क में एक गलत अनुमान शामिल है। दरअसल, प्रासंगिक मानक यह नहीं है कि क्या वैश्वीकरण के पिछले 25 वर्षों के दौरान गरीबों की स्थिति में सुधार हुआ है या नहीं। इसकी बजाय, मानक यह है कि क्या वैश्वीकरण का कोई वैकल्पिक रास्ता नहीं है? क्या वैश्वीकरण का कोई ऐसा रूप नहीं है जो ऐसी परा-राष्ट्रीय संस्थाओं को बढ़ावा दे जिनसे मानवाधिकारों का कम घाटा (deficit) सामने आए। यदि इस तरह की कोई वैकल्पिक योजना है तो हम वर्तमाना संस्थात्मक व्यवस्था को थोपकर दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। इसे समझने के लिए यह कल्पना कीजिए कि कोई व्यक्ति 1845 में संयुक्त राज्य अमेरीका में रह रहा है। वह इस बात का खंडन करना चाहता है कि काले लोगों की दासता को लागू करने वाली संस्थात्मक व्यवस्था ने उनके मानवाधिकारों का उल्लंघन किया है। ऐसा करने के लिए वह यह तर्क देता है कि अमेरीका की कुल जनसंख्या में दासों की संख्या में (या फिर कुल दासों की संख्या में) लगातार गिरावट हो रही है। वह यह भी तर्क दे सकता है कि दासों की राष्ट्रीय स्थिति में लगातार सुधार हुआ है और अब उनके साथ बलात्कार, पिटाई और परिवार के बँटवारे जैसी घटनाएँ बहुत कम हो रही हैं। सिर्फ तर्क की खातिर हम यह मान लेते हैं कि इन तरीकों से दासता से जुड़ी सबसे बुरी बात में लगातार गिरावट हो रही है। क्या यह तथ्य किसी भी तरीके से इस दावे को कमजोर करता है कि दासता की संस्था ने दासों के मानवाधिकारों का उल्लंघन किया है? यदि इसका जवाब 'ना' है तो वैश्वीकरण को सही साबित करने के लिए सिर्फ यह कहना काफी नहीं है कि इससे लोगों की बहुत ज्यादा गरीबी में गिरावट आई है। दरअसल, यह इस दावे को खारिज नहीं करता है कि

---

http://www.ilo.org?global?topics?child-labour?langen/index.htm (इसे मैंने आखिरी बार 4 अप्रैल 2011 को देखा)

[39] *वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन, ग्लोबल बर्डेन ऑफ डिजीज: 2004 अपडेट*, 54-59 (2008) (सारणी ए1)

वर्तमान वैश्विक संस्थात्मक व्यवस्था मानवाधिकारों का उल्लंघन करती है। यह एक प्रासंगिक सवाल नहीं है कि क्या वैश्विक मानवाधिकारों का घाटा कम हो रहा है और यदि यह कम हो रहा है तो कितना कम हो रहा है। प्रासंगिक सवाल यह है कि हमारे द्वारा लागू की गई परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्थाओं की रूपरेखा किस सीमा तक मानवाधिकारों के घाटे में योगदान करती है।[40]

सामान्य समझ पर आधारित इस मानक को दिमाग में रखते हुए अब हम इस बात पर ध्यान देंगे कि वैश्वीकरण के दौरान वैश्विक जनसंख्या के हिस्से ने कैसा प्रदर्शन किया है।[41]

सारणी 1

विश्व की जनसंख्या का हिस्सा	1988 में वैश्विक घरेलू आय का हिस्सा	2005 वैश्विक घरेलू आय का हिस्सा	आय के हिस्से में असीम बदलाव	आय के हिस्से में तुलनात्मक बदलाव
सबसे धनी 5 प्रतिशत	42.87	46.36	+3.49	+8.1%
अगले 5 प्रतिशत	21.80	22.18	+ 0.38	+1-7%
अगले 15 प्रतिशत	24.83	21.80	-3.03	-12.2%
दूसरी चौथाई	6.97	6.74	-0.23	-3.3%
तीसरी चौथाई	2.37	2.14	-0.23	-9.7%
सबसे गरीब चौथाई	1.16	0.78	-0.38	-32.8%

[40] यह पैराग्रॉफ मेरे द्वरा मथियास रीसे (Matthias Risse) को दिए गए जवाबद पर आधारित है। देखें, थॉमस पोगे, सीवीयर पोवर्टी एज वॉयलेशन ऑफ निगेटिव ड्युटीज, सुपरा नोट 4, पृ. 55-58; संस्थात्मक नुकसान के आधार की ज्यादा विस्तृत विवेचना के लिए देखें, सीवीयर पोवर्टी एज अ ह्युमन राइट्स वॉयलेशन, संकलित, फ्रीडम फ्रॉम पोवर्टी एज अ ह्युमन राइट: व्हू वोज व्हाट टू द वेरी पुअर? 11, 11-54 (थॉमस पोगे संपादित, 2007); जैसा कि मैं कुछ समय बाद दिखाऊँगा (नोट 43) कि इस बात पर सवाल खड़ा किया जा सकता है कि मैंने इस पैराग्राफ में जो बातें कही हैं वे सच हैं या नहीं- यानी यह बात सच है कि नहीं कि दुनिया भर में वैश्वीकरण के दौर में गरीबी के सबसे बुरे रूपों में गिरावट आई है।

[41] ये आँकड़े विश्व बैंक के ब्रैंको मिलानोविक (Branko Milanovic) ने व्यक्तिगत ईमेल द्वारा उपलब्ध कराए हैं। देखें, ईमेल फ्रॉम ब्रैंको मिलानोविक, सुपरा नोट 3.

इस सारणी से यह बात स्पष्ट है कि ऊपरी पाँच प्रतिशत लोगों का वैश्विक आय के विरतण के बड़े हिस्से पर महत्वपूर्ण अधिकार है, जबकि सबसे गरीब 80 प्रतिशत लोग अपना आधार खो चुके हैं। सबसे गरीब एक चौथाई लोगों में बहुत ज्यादा नाटकीय ध्रुवीकरण हुआ है। सिर्फ पिछले 17 वर्षों में ऊपरी 5 प्रतिशत लोगों की औसत आय और सबसे गरीब चौथाई लोगों की औसत आय के बीच अंतर 185 से 297 हो चुका है। सारणी से यह भी पता चलता है कि विश्व की गरीबी की समस्या आर्थिक संदर्भ में बहुत ही छोटी है और मानवीय संदर्भ कल्पना से भी ज्यादा बड़ी। 2005 में एक पर्याप्त जीवनस्तर के लिए जरूरी आय से विश्व के गरीबों की आय कम थी। यह वैश्विक स्तर पर घरों की आय से दो प्रतिशत कम थी या विश्व की आय (सभी राष्ट्रीय आयों के कुल योग) से 1.2 प्रतिशत कम थी।[42] 1988–2005 के बीच हुए अमीर लोगों (कुल बीसवे हिस्से) के फायदे से वैश्विक गरीबी के स्तर पर मौजूद इस अंतर को दो बार भरा जा सकता था। इन तथ्यों को देखते हुए यह जा सकता है कि वर्तमान समय में जो व्यापक गरीबी मौजूद है उससे बचा जा सकता था।

इस दौर में विश्व के सबसे गरीब लोगों एक चौथाई हिस्से ने वैश्विक घरेलू आय (global household Income) में अपने पहले से ही बहुत छोटे हिस्से को खो दिया है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि बहुत ज्यादा संख्या में लोग अभी भी बहुत ज्यादा गरीबी में जीवन गुजार रहे हैं। ये लोग पर्याप्त जीवन-स्तर से बहुत ही नीचे जिंदगी जी रहे हैं। इस संदर्भ में संयुक्तराष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन द्वारा दिया गया आँकड़ा सबसे ज्यादा विश्वसनीय है।[43]

---

[42] यह मोटे तौर पर विश्व बैंक की पीपीपी आधारित गणना से मेल खाता है। इसमें 2005 में यह अनुमान लगाया गया कि 3,085 मिलियन लोग बहुत ज्यादा गरीबी में जीवन गुजार रहे हैं। इसमें इनके सामूहिक गिरावट का भी अनुमान लगाया गया है। इसमें यह बताया गया है कि वैश्विक गरीबी अंतर विश्व की आय का 1.3 प्रतिशत है। सुपरा नोट 3, पृ. 69.

[43] ये आँकड़े मुख्य रूप से इस दस्तावेज से लिए गए हैं- वर्ल्ड फूड प्रोग्राम एंड एग्रीकल्चर ऑर्गनाइजेशन, द स्टेट ऑफ फूड इनसेक्योरिटी इन द वर्ल्ड 2010: एड्रेसिंग फूड इनसेक्योरिटी इन प्रोटेक्टेड क्राइसिस (2010). इसे इस वेब पते पर संक्षेप में दिया गया है-

सारणी 2

वर्ष	कुपोषित व्यक्तियों की संख्या (मिलियन में)	विश्व की जनसंख्या में कुपोषित व्यक्तियों को प्रतिशत
1969–1971	878	26
1979–1981	853	21
1990–1992	843	16
1995–1997	788	14
2000–2002	833	14
2005–2007	848	13
2008	963	14
2009	1023	15
2010	925	14

हमारा मुख्य अनुभवसिद्ध सवाल (emperical quistion) यह है कि क्या वर्तमान परा-राष्ट्रीय संस्थाओं का कोई ऐसा विकल्प हो सकता है जिससे मानवाधिकारों का घाटा बहुत कम हो। ऊपर दिए गए आँकड़ों से हम इस सवाल के बारे में क्या नतीजा निकाल सकते हैं? निश्चित रूप से, इस बात की संभावना है कि इस तरह का कोई व्यावहारिक विकल्प मौजूद न हो, लेकिन आँकड़े से यह स्पष्ट है कि सबसे अच्छा विकल्प नहीं था। इस तरह के विकल्प की संभावना को नकारने का मतलब है कि यह तर्क दिया जाए कि वैश्वीकरण के संस्थात्मक पथ का कोई विकल्प नहीं है। यानी कोई ऐसा विकल्प नहीं है जिसके द्वारा गरीबों की स्थिति को बदतर बनाने से रोका जाए

---

www.fao.org/emergence/tce-home/news/emergencynews/emergencydetail/0/item/8894/icode/en/ (इसे मैंने आखिरी बार 22 फरवरी 2011 को देखा)। 2008–10 के प्रतिशत की गणना ह्युमन पॉपुलेशन क्लॉक के आँकड़ो से की गई है। यह इस वेब पते पर उपलब्ध है: http://galen.metapath.org/popclk.html (इसे मैंने आखिरी बार 22 फरवरी 2011 को देखा)। 1.5 डॉलर प्रतिदिन से कम पर जिंदगी गुजारने वाले लोगों की गणना करते हुए विश्व बैंक ने बहुत ज्यादा गरीबी की प्रवृत्ति के बारे में एक बेहतर तस्वीर पेश की। लेकिन इसने यह गणना बहुत सारी विरोधाभासी प्रणाली के आधार पर की। इसमें सामान्य घरेलू उपभोग पीपीपी का अनुचित उपयोग किया गया। इसकी विस्तृत विवेचना के लिए देखें, *पॉलिटिक्स एज युजुअल*, सुपरा नोट 3, अध्याय 4

और एक हद तक अच्छी वैश्विक आर्थिक संवृद्धि भी हासिल की जाए।[44] यह तर्क बहुत दमदार नहीं है।

इस दावे के कमजोर होने की बात और ज्यादा स्पष्ट रूप से सामने आती है जब हम यह देखते हैं कि वैश्वीकरण ने गैर-लोकतांत्रिक और धनी लोगों के समर्थन वाला रास्ता अपना लिया है। वैश्वीकरण के कारण परा-राष्ट्रीय कानून और नियंत्रण की ज्यादा पेचीदा, व्यापक और प्रभावकारी व्यवस्था उभरकर सामने आई। इसने राष्ट्रीय कानून के रूप को बहुत ज्यादा सीमित और प्रभावित किया। जिन देशो ने घरेलू न्याय का एक बुनियादी स्तर हासिल कर लिया है, वहाँ कानूनों का निर्माण पारदर्शी और लोकतांत्रिक प्रक्रिया के अनुसार होता है। लेकिन परा-राष्ट्रीय कानून इस तरह की पारदर्शी और लोकतांत्रिक प्रक्रिया द्वारा नहीं बनाए जाते हैं। इसकी बजाय, परा-राष्ट्रीय नियम मोटे तौर पर अंतर-सरकारी समझौते के द्वारा उभरकर सामने आते हैं। इस पूरी प्रक्रिया से आम लोग और कमजोर सरकारों को बाहर रखा जाता है। परा-राष्ट्रीय नियमों के निर्माण में सिर्फ कुछ लोगों का सिक्का ही चलता है। ऐसे 'खिलाड़ियों' की संख्या बहुत ही कम होती है। इसमें शक्तिशाली संगठन मसलन बहुराष्ट्रीय कॉरपोरेशन और बैंकों के साथ-ही-साथ धनी व्यक्ति और उनके साहचर्य तथा अधिकांश विकासशील देशों के शासक 'अभिजन' शामिल होते हैं। ये सबसे धनी और सबसे शक्तिशाली एजेंट के रूप में होते हैं और ये लागत और फायदे के लिए लॉबिंग करने की बेहतर स्थिति में होते हैं। परा-राष्ट्रीय नियमों के अनुकूल होने पर इन्हें बहुत ज्यादा फायदा हो सकता है। इसलिए ये जरूरी विशेषज्ञता हासिल करने, एक-दूसरे से गठजोड़ बनाने और और मजबूत सरकारों के लिए लॉबिंग करने पर बहुत ज्यादा खर्च कर सकते हैं (जी7, जी8, जी20) ताकि वे परा-राष्ट्रीय नियमों में इनका प्रभुत्व कायम रह पाए। इसके विपरीत, सामान्य नागरिकों के लिए जरूरी विशेषज्ञता हासिल करना और बड़े कॉरपोरेट घरानों से प्रतियोगिता करने लायक गठजोड़ बनाना बहुत ही मुश्किल है। वैश्विक लोकतांत्रिक संस्थाओं के अभाव में वैश्वीकरण मनुष्यों के बड़े बहुमत की उपेक्षा करता है। ये वे लोग होते हैं जो किसी भी तरह से परा-राष्ट्रीय नियमों के निर्माण और उसके लागू करने की प्रक्रिया को प्रभावित नहीं कर पाते हैं। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में कुछ ऐसे लोग नियमों को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो

[44] ज्यादा विस्तृत विवेचना के लिए देखें, थॉमस पोगे, रिस्पांसेज टू द क्रिटिक्स, संकलित, थॉमस पोगे एंड हिज क्रिटिक्स 175, 175-91 (ऐलीसन जैग्गर संपादित, 2010).

पहले से ही बहुत ताकतवर होते हैं। (इनमें से बहुत से लोग पहले से ही इसका अंदाजा लगाने में सफल रहें, इसलिए ये वैश्वीकरण को आगे बढ़ाने के सबसे मजबूत समर्थक बन गए)। उनके हित बहुत ही विविधता भरे हैं। इसलिए वे आपसे में होड़ करते हैं और एक-दूसरे से सौदेबाजी भी करते हैं। इनमें से हर कोई यह चाहता है कि परा-राष्ट्रीय संस्थाओं के नियम इस तरह के हों कि उसे ज्यादा-से-ज्यादा फायदा हो। इस होड़ में कोई विजेता बनता है और किसी को हार का सामना करना पड़ता है। कुछ अभिजन नियमों को इस तरह तैयार करने में नाकाम रहते हैं जिससे उन्हें सबसे ज्यादा फायदा हो। फिर भी, कुछ दूसरे अभिजन खिलाड़ी नियमों को अपने हिसाब से मोड़ लेत हैं। इसका नतीजा यह होता है कि एक समूह के रूप में वैश्विक संपत्ति में अभिजनों का हिस्सा बढ़ता जाता है। शेष मानवता की तुलना में अभिजनों के इस समूह को बहुत ज्यादा फायदा होता है। इस तरह, यह नियमों को अपने पक्ष में प्रभावित करने की उनकी क्षमता को और ज्यादा बढ़ता है। इस पूरी प्रक्रिया के कारण दुनिया की जनसंख्या के आधे से ज्यादा लोग भयंकर गरीबी में रहते हैं।

इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि संस्थाओं में राष्ट्रीय स्तर से परा-राष्ट्रीय स्तर पर बदलाव मानवता के गरीब में बहुमत और ज्यादा हाशिए पर ढ़केलता है। ये लोग किसी भी तरह से परा-राष्ट्रीय समझौतों को प्रभावित नहीं कर सकते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में सम्पन्न छोटे समूह की सम्पति और शक्ति में लगातार बढ़ोतरी होती है। ये लोग परा-राष्ट्रीय नियमों को बहुत ज्यादा प्रभावित करते हैं। पिछले 20 वर्षों में जबर्दस्त वैश्विक ध्रुवीकरण हुआ है। इसका सबसे प्रमुख कारण यह है कि वैश्वीकरण का बहुत ही अलोकतांत्रिक स्वरूप है और इसने कुछ खास सम्पन्न तबकों को ही अवसर उपलब्ध कराया है।

ब. क्या गरीबी सिर्फ पूरी तरह से घरेलू कारणों से कायम है?

अनुभवसिद्ध सिद्धांतकार (emperical theorist) यथा-स्थिति कायम रखने के लिए एक अन्य तर्क भी देते हैं। इनका यह कहना है कि जिन समाजों में गरीबी कायम है, वहाँ गरीबी उस समाज के

आतंरिक या घरेलू कारणों से है। ऊपर ध्रुवीकरण की जिस परिघटना की चर्चा की गई है, वह सिर्फ परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्थाओं के कारण नहीं है। दरअसल, इसमें दो तरह की परिघटनाएँ शामिल हैं। पहला, बेहतर तरीके से संगठित पश्चिमी समाजों में अच्छी प्रगति हुई है, जिससे सामाजिक न्याय का उच्च स्तर तथा आर्थिक संवृद्धि का ठीक-ठाक दर कायम रहा है। दूसरा, बहुत से देशों में मिश्रित प्रगति हुई है। इन देशों में सामाजिक न्याय पर बहुत कम ध्यान दिया गया है और जिनकी आर्थिक संवृद्धि में बहुत से स्थानीय, प्राकृतिक, सांस्कृतिक या राजनीतिक बाधाओं ने रोड़े अटकाए हैं। इस तस्वीर के प्रमाण के रूप में दो तरह के अनुभवसिद्ध प्रमाण पेश किए गए हैं। पहला, समृद्ध और विकासशील देशों की खाई अब ज्यादा नहीं बढ़ रही है। इसका कारण यह है कि खासतौर पर चीन और भारत ने आर्थिक संवृद्धि की दीर्घकालिक दर को कायम रखा है। इनकी आर्थिक संवृद्धि दर यूरोप, उत्तरी अमेरीका और जापान की तुलना में ज्यादा रही है।[45] इस आधार पर यह तर्क दिया जाता है कि परा-राष्ट्रीय नियम गरीब देशों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं हैं; और आज ध्रुवीकरण के बढ़ने का मुख्य कारण यह है कि राष्ट्र के भीतर असमानता बहुत ज्यादा बढ़ रही है। यह हर देश का घरेलू मसला है और हर देश अपने देश की स्थिति के लिए जिम्मेदार है।

इस तर्क की प्रतिक्रिया के रूप में यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण के हाल के दौर में सिर्फ एक चौथाई विकासशील देशों और सबसे गरीब विकासशील देशों के सिर्फ दसवें हिस्से की प्रति व्यक्ति जीडीपी ही एक समूमह के रूप में ऊँची आय रखने वाले देशों से आगे गई है।[46] ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि तकरीबन सभी देशों में राष्ट्र के भीतर आर्थिक असमानता में बढ़ोतरी हुई है, लेकिन इसके लिए सिर्फ घरेलू कारक जिम्मेदार नहीं हैं। दरअसल, इसमें परा-राष्ट्रीय नियमों के बढ़ते दखल ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन नियमों का राष्ट्रीय कानूनों के निर्माण तथा वस्तुओं, सेवाओं, श्रम, और निवेश के घरेलू बाजार के प्रशासन में दखल बहुत ज्यादा बढ़ गया है।

---

[45] देखें, वर्ल्ड बैंक, *वर्ल्ड डेवेलपमेंट रिपोर्ट 2010: डेवेलपमेंट एंड क्लाइमेट चेंज*, 378-379 (2010).

[46] वर्ल्ड रिर्सोस इंस्टीट्युट, इकोनॉमिक्स, बिजनेस, एंड द इनवायरमेंट डेटाबेस, http://earthtrends.wri.org/searchable_db/index.php?theme=5 (इसे मैंने आखिरी बार 4 अप्रैल 2011 को देखा)।

कुछ मामलों परा-राष्ट्रीय नियमों का सीधा और तात्कालिक प्रभाव होता है और कुछ अन्य मामलों में प्रतियोगिता इसमें मध्यस्थ की भूमिका निभाती है। सीधे और तात्कालिक प्रभाव को समझने के लिए एक उदाहरण पर विचार करते हैं। विश्व व्यपार संगठन (डब्ल्यूटीओ) संस्था का एक महत्वपूर्ण भाग 'ट्रेड रिलेटेड ऐसपेक्ट्स ऑफ इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स' (टीआरआईपीएस या ट्रिप्स) (बौद्धिक संपदा अधिकारों का व्यापार संबंधी आयाम) है। इसमे डब्ल्यूटीओ के सभी सदस्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा व्यवस्था स्थापित करें, जो नई दवाईयों के लिए कम-से-कम 20 साल की अवधि का पेटेंट जारी करे और उसे लागू करे। इसलिए इसने जातीय उत्पादों (generic products) के उत्पादन और बिक्री पर रोक लगा दी। इस शर्त के कारण दवाईयों के दाम में बहुत ज्यादा वृद्धि हुई। इससे गरीब लोग बहुत ज्यादा प्रभावित हुए क्योंकि उनके रहन-सहन के कारण उन्हें बीमारी होने की संभावना ज्यादा होती है और इसलिए उन्हें दवाईयों की भी ज्यादा जरूरत होती है। ट्रिप्स के न होने पर गरीब लोग बहुत सी दवाईयों को खरीदने में समर्थ थे। लेकिन इस नियम के आ जाने के बाद ये दवाईयाँ उनके बूते के बाहर हो गईं। इस कारण वे तुलनात्मक रूप से खराब दवाईयों को खरीदते हैं या फिर बिना दवाईयों के ही रह जाते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि उनकी बीमारी बहुत ज्यादा बढ़ जाती है और कई दफा उनकी मौत भी हो जाती है। इसका उनके परिवार की जीविका पर बहुत ही भयंकर प्रभाव पड़ता है।[47]

प्रतियोगिता की मध्यस्थता द्वारा परा-राष्ट्रीय नियमों के प्रभाव को भी एक उदारहण द्वारा समझा जा सकता है। डब्ल्यूटीओ का समझौता खुले और प्रतियोगी वैश्विक बाजार की व्यवस्था करता है। लेकिन इसमें कोई ऐसा समान श्रम मानक नहीं बनाया गया है जो श्रमिकों को काम के खराब स्थिति, कम वेतन या बहुत ज्यादा समय तक काम करने से बचाए। यह गरीबों देशों को एक व्यर्थ के होड़ में लगा देता है। ये देश विदेशी निवेश के लिए आपस में होड़ करते हैं और एक-दूसरे की तुलना में अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए ज्यादा सस्ती श्रम-शक्ति पेश करते हैं। डब्ल्यूटीओ वैश्वीकरण की शर्तों के अनुसार श्रमिक अपने रोजगार की शर्तों में इस तरह की गिरावट का प्रतिरोध नहीं कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि यदि वे अपने लिए काम के

---

[47] देखें थॉमस पोगे, द हेल्थ इम्पैक्ट फंड एंड इट्स जस्टिफिकेशन बाई अपील टू ह्युमन राइट्स, संकलित 40 *जर्नल ऑफ सोशल फिलॉसफी*, 4, 542 (2009).

ज्यादा मानवीय स्थितियों की माँग करते हैं, तो इनमें से बहुत सारे लोग बेरोजगार हो जाएँगे क्योंकि बहुत सारी नौकरियाँ दूसरे देशों में चली जाएँगी।

इसलिए विकासशील देशों में बहुत ज्यादा घरेलू असमानता अपेक्षित ही है। और दरअसल हम सभी विकासशील देशों में इस तरह की परिघटना देख सकते हैं। इस संदर्भ में अर्जेन्टीना, बांग्लादेश, कोस्टा रीका, द डॉमिनिकन रिपब्लिक, इक्वाडोर, हंगरी और जमैका जैसे विविध देशों से संबंधित आँकड़े भी उपलब्ध हैं।[48]

चीन का मामला खासतौर पर रोचक है। इसका कारण यह है कि यहाँ दुनिया की जनसंख्या का पाँचवा हिस्सा रहता है और इसके विकास को वैश्वीकरण के सकारात्मक प्रभाव के रूप में पेश किया जाता है। यह कहा जाता है कि चीन की प्रति व्यक्ति कुल राष्ट्रीय आय में 236 प्रतिशत की शानदार बढ़ोतरी हुई है।[49] लेकिन इसी दौर में असमानता में भी बहुत ज्यादा बढ़ोतरी हुई। यहाँ ऊपर के दस प्रतिशत की आय में 25 से 35 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई। दूसरी ओर, जनसंख्या के सबसे गरीब पाँचवे हिस्से की आय में 7.3 से 4.3 प्रतिशत तक की गिरावट हुई।[50] इसका मतलब यह है कि इन दो समूहों की औसत आय के अनुपात में 6.8 से 16.3 तक की औसत बढ़ोतरी हुई है। इसका कारण यह है कि ऊपरी दस प्रतिशत की औसत आय में 370 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है, जबकि सबसे गरीब पाँच प्रतिशत की आय में सिर्फ 98 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। निश्चित रूप से, 14 वर्षों के अंतराल में आय में 98 प्रतिशत की बढ़ोतरी को बुरा

---

[48] यूनाइटेड नेशन्स यूनिवर्सिटी वर्ल्ड इंस्टीट्युट फॉर डेवेलपमेंट इकोनॉमिक्स रिसर्च [यूएनयू-डब्ल्यूआईडीईआर], वर्ल्ड इंकम इनइक्वालिटी डेटाबेस, वोल्यूम 2.0सी, मई 2008, http://www.wider.unu.edu/research/Database/en_GB/database.

[49] विश्व बैंक के आँकड़ो का प्रयोग करके यह गणना की गई है। इसमें चीन के हर साल के कुल राष्ट्रीय आय को उस साल की चीन की कुल जनसंख्या से भाग दिया गया है। इसके बाद, चीन के कुल डीजीपी का उपयोग डिफ्लैटर (deflator) के रूप में करके इसे 2005 के युआन के स्थिर मूल्य में बदला गया है (एक बार देखना है)।

[50] 1990 के वितरण का आँकड़ा विश्व बैंक का है, जो कैमेलिया मिनोउ और संजय रेड्डी की किताब से लिया गया है। देखें कैमेलिया मिनोउ और संजय रेड्डी, 'चाइनीज पॉवर्टी: असेसिंग द इम्पैक्ट ऑफ अल्टरनेटिव असम्प्शन्स', 54 *रिव्यू ऑफ इंकम एंड वेल्थ* 4, 572, 577 (2008) (सारणी 1). 2004 का वितरण आँकड़ा विश्व बैंक का है- वर्ल्ड बैंक, वर्ल्ड डेवेलपमेंट इंडिकेटर्स 2008, 68 (2008) (सारणी 2.8).

नहीं माना जा सकता है। लेकिन चीन के गरीबों को इसकी बहुत ही ऊँची कीमत अदा करनी पड़ी है। उन्हें उभरते आर्थिक अभिजनों के हाथों हाशियाकरण, अवमानना और दमन का सामना करना पड़ा है। चीन के घरेलू आय में इन अभिजनों का हिस्सा बहुत ज्यादा बढ़ गया है। इससे उन्हें राजनीतिक फैसलों को प्रभावित करने का ज्यादा अवसर मिलने लगा हैं। उनके बच्चों को भी इसका अनुचित फायदा मिला है। अब ये लोग गरीबों से सीधी बातचीत के दौरान उन पर अपनी धौंस जमाने लगे हैं। ज्यादा समान आर्थिक संवृद्धि होने पर इन गरीबों की स्थिति ज्यादा बेहतर होती, भले ही इसके चलते उनकी आय में थोड़ी कम बढ़ोतरी होती।

हम इक्कीसवीं सदी के एक अन्य बड़े देश संयुक्त राज्य अमेरीका में भी इस तरह की स्थिति सामने आती है। अमेरीका का अनुभव क्युजनेट्स कर्व परिकल्पना (Kuznets Curve hypothesis) के अनुसार ही रहा है। महामंदी (Great Depression) से लेकर वर्तमान वैश्वीकरण के दौर की शुरूआत तक अमेरीका में क्रमिक रूप से लोगों की आय बराबर ही हुई है। बहरहाल, इसके बाद के दौर में क्युजनेट्स (Kuzenets) की परिकल्पना के विपरीत लोगों की आय में नाटकीय ध्रुवीकरण हुआ है। 1990 के दशक में यह ध्रुवीकरण बहुत ही तेजी से बढ़ा है। अगली सारणी हमें यह पूरी कहानी बताती है। खासतौर पर इंटरनल रेवेन्यू सर्विस के आँकड़े (जो चीन के आँकड़ों से ज्यादा स्पष्ट हैं) यह बताते हैं कि इस दौर पर हुआ फायदा मोटे तौर पर सिर्फ कुछ लोगों के हाथों में ही केन्द्रित रहा है। अब सिर्फ 400,000 लोग उतना कमाते हैं जितना की 150 मिलियन गरीब लोग। अमेरीका के ऊपर 0.01 प्रतिशत घरों की अमेरीका के घरेलू आय में हिस्सेदारी बहुत ज्यादा बढ़ी है। इससे गरीब आधी अमेरीका की तुलना में इनकी औसत आय के फायदे में छह गुना बढ़ोतरी हुई है अर्थात् इसमें 375:1 से 2214:1 की बढ़ोतरी हुई है। जनसंख्या के ऊपरी बीसवें हिस्से को ही फायदा हुआ है, बाकी 19 वेंटाइल्स (ventiles) की आय में गिरावट हुई है। **(एक बार देखना है)**। सबसे नीचे के स्तर पर ये तुलनात्मक नुकसान सबसे ज्यादा हैं।[51]

[51] सारणी के ऊपरी पाँच कतार फेकुण्डो अलवरेडो, टोनी अटकिंसन, थॉमस पिकेटी और इमैनुअल सेज द्वारा उपलब्ध कराए गए आँकड़े हैं; टॉप इंकम डेटाबेस,

सारणी 3

संयुक्त राज्य अमेरीका की जनसंख्या	1928/29 में घरेलू आय	1980/81 में घरेलू आय	2007/08 में घरलू आय	1980/1–2007/8 में आय में हिस्सेदारी	आय की हिस्सेदारी में बदलाव
सबसे धनी 0. 01 प्रतिशत	5.01	1.33	5.54	+4.21	+318%
उसके बाद का 0.09 प्रतिशत	6.22	2.17	5.81	+3.64	+168%
उसके बाद सबसे धनी 4 प्रतिशत	14.38	13.09	15.37	+2.28	+17%
अगला पाँच प्रतिशत	10.48	11.48	11.39	−0.09	-1%
अगला 15 प्रतिशत		24.63	21.14	−3.49	-14%
दूसरा चौथाई		25.61	19.45	−6.16	-24%
सबसे गरीब आधी जनसंख्या		17.72	12.51	−5.21	-29%

---

http://gmond.parissschoolofeconomics.eu/topincomes/ (इसे मैंने आखिरी बार 4 अप्रैल 2011 को देखा)। बाकी की तीन कतारों में मार्क रोबिन और जेराल्ड प्रेंटे (Gerald Prante) द्वारा उपलब्ध कराए गए आँकड़े हैं; टैक्स फाउंडेशन, समरी ऑफ लेटेस्ट फेडेरल इंडिविड्युअल इंकम टैक्स डेटा (सारणी 5), www.taxfoundation.org/publications/show/250.html (इसे मैंने आखिरी बार 2 अप्रैल 2011 को देखा)। चूंकि ये आँकड़े अलग-अलग स्त्रोतों से आए हैं, इसलिए कॉलम 2-4 बहुत ठीक तरीके से सामने नहीं आते हैं। लेकिन इससे इस सारणी के मुख्य बिंदु पर कोई असर नहीं पड़ता है। इसका मुख्य मकसद संयुक्त राज्य अमेरीका में आय के वितरण में तीखे ध्रुवीकरण को दिखाना है। इसे सबसे दाहिने कॉलम में दिखाया गया है।

स्पष्टत: अमेरीका में आय का ध्रुवीकरण हुआ है और इसके कारण यहाँ के गरीबों का आर्थिक और राजनीतिक हाशियाकरण हुआ है। यह इस बात को स्पष्ट करता है कि राष्ट्रों के भीतर बढ़ती असमानता एक विश्वव्यापी परिघटना है। निश्चित रूप से, इस पर घरेलू कारकों का प्रभाव पड़ता है और घरेलू राजनीतिक प्रक्रियाओं द्वारा इसका प्रतिरोध किया जा सकता है। लेकिन पिछले दशकों के विश्व व्यापार संगठन के वैश्वीकरण ने इसके लिए अनुकूल माहौल तैयार किया और इसमें मददगार की भूमिका निभाई। अमेरीका का ध्रुवीकरण एक उपयोगी राजनीतिक बिंदु की ओर भी संकेत करता है: यदि अमेरीका की जनसंख्या के सबसे गरीब 90 प्रतिशत लोगों को अपने हितों की बेहतर जानकारी होती तो वे वैश्वीकरण के लोकतंत्रीकरण के लक्ष्य से काम करने वाले गठजोड़ के संभावित सहयोगी होते। ये भी इस गठजोड़ के साथ मिलकर छोटे वैश्विक अभिजन के तकरीबन एकाधिकारवादी शक्ति को कम करने की कोशिश करते। दरअसल, इस छोटे वैश्विक अभिजन ने ही परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन्हें अपना सहयोगी बनाने के लिए हम इनके हितों की ओर ध्यान दे सकते हैं। इसके अलावा, निश्चित तौर पर हम उनके मानवाधिकारों के प्रति वचनबद्धता को भी अपील कर सकते हैं, जो कि इस लेख का मुख्य विषय है। अब मैं वर्तमान परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्थाओं की कुछ प्रमुख विशेषताओं की विवेचना करूँगा। मेरा यह मानना है कि मानवाधिकारों को हासिल करने में ये बड़ी रूकावटें हैं।

मेरा यह विवरण इन संस्थाओं के बारे में कही जाने वाली अच्छी बातों से पूरी तरह अलग है। दरअसल, परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्था के बारे अच्छी बातें करते वक्त व्यापक गरीबी की कभी-कभी ही चर्चा की जाती है। यदि कभी गरीबी की चर्चा की जाती है तो इसकी व्याख्या के लिए दो कारकों का सहारा लिया जाता है। पहला, बहुत से गरीब देशों में मौजूद भ्रष्ट और दमनकारी शासन और विकास सहायता की 'चूने वाली बाल्टी' (leaky bucket)। इन दोनों ही व्याख्याओं में कुछ हद तक सच्चाई है। लेकिन पहला कारक इस बात की व्याख्या करने में नाकाम रहता है कि भ्रष्ट और दमनकारी शासन की व्यापकता का क्या कारण है; और दूसरा कारक इस बात की व्याख्या नहीं कर पाता है कि आय में गरीबों की हिस्सेदारी तेजी से कम क्यों हो रही है।

मैं अपनी व्याख्या में इस रूपक को फिर से लागू कर सकता हूँ: गरीबों की संपदा 'चूने वाली बाल्टी' (leaky bucket) की तरह है। बहुत ज्यादा नियमित दोहन होने से इसका क्षरण हो गया है। इस कारण, विकास के लिए जो थोड़ी-बहुत मदद मिलती है, इसने उसको बहुत ज्यादा प्रभावित किया है। हम इस बात पर बहुत गर्व करते हैं कि हम गरीब देशों की मदद करते हैं और इनकी मदद के लिए हम हर साल अरबों डॉलर खर्च करते हैं। लेकिन हम इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं देते हैं कि हम गरीबों से कितना संसाधन बिना कोई मुआवजा दिए छीन रहे हैं। आगे मैंने यह बताने की कोशिश की है कि हम ऐसा किस तरह से करते हैं।

पहला, सम्पन्न देश और उनके उद्यम (firms) विकासशील देशों के शासकों से बहुत भारी मात्रा में प्राकृतिक संसाधन खरीदते हैं। वे इस बात पर कोई ध्यान नहीं देते हैं कि इस तरह के नेता कैसे सत्ता में आते हैं और अपनी सत्ता का कैसे प्रयोग करते हैं। विकासशील देशों के लोग इन संसाधनों के मालिक होते हैं। अधिकांश मामलों सम्पन्न देश और उनके उद्यम इन लोगों से संसाधनों को छीनने में सहयोग करते हैं। इससे उनके शोषकों की सम्पन्नता और भी बढ़ती है और इस तरह शोषण में भी बढ़ोतरी होती है। तानाशाह लोगों के प्राकृतिक संसाधन हमें बेचते हैं। फिर, वे इससे मिले पैसे का उपयोग हथियारों को खरीदने में करते हैं ताकि वे खुद को सत्ता में कायम रख पाएँ।[52]

दूसरा, सम्पन्न देश और उनके बैंक इस तरह के शासकों को धन मुहैया कराते हैं। फिर इन शासकों के हट जाने के बाद भी वे इन देशों के लोगों को इस धन की वापसी के लिए मजबूर करते हैं। बहुत से गरीब देशों के लोग अभी भी वह कर्ज चुका रहे हैं जो उनकी इच्छा के खिलाफ लिया गया था। इंडोनेशिया में सुहार्तो, डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑफ कांगो में मोबतु और नाइजीरिया में अबाचा (Abacha) इस तरह के शासकों के उदाहरण हैं। सच्चाई यह है कि हम चोरी में भागीदारी कर रहे हैं; हम भयंकर गरीबी से पीड़ीत लोगों पर एकतरफा कर्ज लाद रहे हैं।

तीसरा, सम्पन्न देश कम विकसित देशों के सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा पैसे के गबन को बढ़ावा देते हैं। इसका कारण यह है कि सम्पन्न देश इनके कोषों को स्वीकार करते हैं। इस सह-अपराध

---

[52] देखें थॉमस पोगे, *वर्ल्ड पोवर्टी एंड ह्युमन राइट्स*, सुपरा नोट 27, अध्याय 6, और लीफ वेनर (Leif Weanar), प्रोपर्टी राइट्स एंड द रिसोर्स कर्स, 36 *फिल. एंड पब्लिक अफेयर्स.* 2-32 (2008)

से आसानी से बचा जा सकता है। अब बैंक इस बात पर ज्यादा गहराई से ध्यान देने लगे हैं कि उनके यहाँ जो राशि जमा हो रही है, वह आतंकवाद या ड्रग्स आदि से संबंधित तो नहीं है। लेकिन इसके बावजूद पश्चिमी बैंक गबन किए गए सार्वजनिक कोष के पैसे को बहुत आसानी से स्वीकार करते हैं। यहाँ की सरकारें इस बात को सुनिश्चित करती हैं कि उनके बैंक इस तरह की अवैध राशि के लिए आकर्षक बने रहें। ग्लोबल फायनेंसियल इंटिग्रिटी (वैश्विक वित्तीय निष्ठा) (जीएफआई) ने इस बात का अनुमान लगाया है कि इस पूरी व्यवस्था के कारण कम विकसित देशों 2000 से 2008 के बीच हर साल अपना 342 अरब डॉलर खोया है।[53]

चौथा, सम्पन्न देश बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए कमजोर शर्तें रखते हैं, जिससे उन्हें कम विकसित देशों में टैक्स से बचने का मौका मिलता है। चूंकि उन्हें हर देश के बारे में बताने की जरूरत नहीं होती है, इसलिए ये कॉरपोरेशन अपने मूल्यों को उस देश के आधार पर तय करते हैं जहाँ उन्हें सबसे कम टैक्स देना पड़ता है। इसका नतीजा यह होता है कि ये कॉरपोरेशन यह कह सकते हैं कि जिन देशों से उन्हें कच्चा माल मिला, या जहाँ उन्होंने अपनी वस्तुओं का उत्पादन किया और उन्हें बेचा, वहाँ उन्हें कोई फायदा नहीं हुआ। अपना टैक्स बचाने के लिए वे यह दिखा सकते हैं कि वे किसी ऐसे देश में अपनी मौजूदगी दिखा सकते हैं, जहाँ वे सिर्फ कागज पर ही मौजूद हैं। ग्लोबल फायनेंसियल इंटिग्रिटी के अनुमान के मुताबिक बहुराष्ट्रीय कॉरपोरेशनों की इस तरह की गतिविधियों के कारण 2002–2006 की अवधि के बीच कम विकसित देशों को सालाना 98.4 अरब डॉलर टैक्स राजस्व का नुकसान हुआ।[54]

पाँचवा, पृथ्वी पर फैले प्रदूषण में सम्पन्न देशों की बहुत ज्यादा भूमिका रही है। इनके द्वारा फैलाया गया प्रदूषण स्वास्थ्य समस्याओं, मौसम में बदलाव, समुद्र के बढ़ते स्तर और जलवायु परिवर्तन

---

[53] देव कर (Dev Kar) और कर्ली कुरसियो (Karly Curcio), *ग्लोबल फायनेंसियल इंटिग्रिटी, इलिसिट फायनेंसियल फ्लोज फ्रॉम डेवेलपिंग कंट्रीज: 2000–2009* (2011); हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि इस दौर में वार्षिक रूप से 87 अरब डॉलर की आधिकारिक विकास सहायता दी गई। इसमें से सिर्फ 9 अरब डॉलर 'बुनियादी सामाजिक सेवाओं' के लिए आबंटित किया गया।
(http://unstats.un.org/unsd/mdg/Search.aspx?q=bss%20oda) (इसे मैंने आखिरी बार 4 मार्च 2011 को देखा)

[54] एन होलीनजेसहेड (Ann Hollingshead), *ग्लोबल फायनेंसियल इंटिग्रिटी, द एम्पलायड टैक्स रेवेन्यू लॉस फ्रॉम ट्रेड मिसप्राइसिंग* 15 (2010) (सारणी 2).

जैसी समस्याओं के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। चूंकि विकासशील देशों के गरीब लोग बहुत ही कमजोर होते हैं इसलिए वे इस तरह की समस्याओं से जल्दी और सबसे प्रभावित होते हैं। ग्लोबल ह्युमेनिटेरियन फोरम के हालिया अनुमानों के मुताबिक जलवायु परिवर्तन 325 मिलियन लोगों को गंभीरता से प्रभावित कर रहा है। इससे वार्षिक रूप से 125 अरब डॉलर का आर्थिक नुकसान हो रहा है। हर साल इससे 300,000 मौतें हो रही हैं। जिन लोगों की मौत हो रही है उनमें से 99 प्रतिशत लोग विकासशील देशों के हैं।[55]

अंत में, सम्पन्न देशों ने वैश्विक व्यापार की ऐसी व्यवस्था बनाई है, जिसके बारे में यह माना जाता है कि यह मुक्त और खुले बाजारों के माध्यम से सामूहिक फायदे उत्पन्न करती है। लेकिन अमीर देश इस व्यवस्था में अपने लिए फायदेमंद स्थिति बनाने में सफल रहे हैं। उन्होंने टैरिफ और एंटी-डम्पिंग ड्युटीज (anti-dumping duties) के द्वारा अपने बाजारों को अपने लिए बचा कर रखा है। इसके अलावा, विश्व के बाजार पर कब्जा जमाने के लिए उन्होंने खेती में निर्यात कर्ज और सब्सिडी दी है। विकासशील देश अपने किसानों को इतना कर्ज या सब्सिडी नहीं दे सकते हैं।[56] सम्पन्न देशों की तुलना में गरीब देशों में उत्पादन ज्यादा श्रम केन्द्रित है, इस कारण इस तरह के सुरक्षावादी उपाय अपनाने से नए काम पैदा होने की जगह, पुराने कामों पर भी संकट का बादल छा गया है।

स. हमें क्या करना चाहिए?

यदि हम इन सभी परा-राष्ट्रीय कारकों पर विचार करें तो यह बात स्पष्ट होती है कि ये गरीबों के लिए बहुत ही गहरी समस्याएँ पैदा करती है।[57] इन गहरी समस्यओं ने सार्वजनिक और निजी विदेशी

---

[55] *ग्लोबल ह्युमेनेटेरियन फोरम, द एनाटॉमी ऑफ साइलेंट क्राइसिस* 1, 78 (2009)

[56] ऑर्ग फॉर इकोन. कोऑपरेशन एंड डेव'ट, एग्रीकल्चरल पॉलिटिक्स इन ओइसीडी पॉलिटिक्स 13 (2009)ɔ

[57] जोशुआ कोहेन ने बहुत ही जोरदार तरीके से यह तर्क दिया है कि ये समस्याएँ बहुत हर कमजोर और अनिश्चित हैं। देखें जोशुआ कोहेन, 'फिलॉसफी, सोशल साइंस, ग्लोबल पोवर्टी', संकलित, *थॉमस पोगे एंड हिज क्रिटिक्स*, सुपरा नोट 44, पृ. 18-45; इसी वोल्यूम में मेरे जवाब के लिए देखें 'रिस्पांसेज टू द क्रिटिक्स', पृ. 175-250; यदि किस्मत अच्छी रही तो यह विवाद इस मुद्दे पर ज्यादा बेहतर अनुभवसिद्ध रिसर्च (emperical research) को बढ़ावा देगा कि परा-राष्ट्री संस्थात्मक व्यवस्थाओं की रूपरेखा के बारे में लिए गए फैसले का क्या वास्तविक प्रभाव पड़ा है।

सहायताओं को प्रभावहीन कर दिया है। इस कारण वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था में गरीब प्रभावकारी तरीके से भागीदारी नहीं कर पा रहे हैं और उन्हें वैश्विक आर्थिक संवृद्धि में अनुपात के हिसाब से फायदा नहीं मिल रहा है। भारी मात्रा में विकास सहायता देकर इस समस्या को हल किया जा सकता है। लेकिन सम्पन्न देशों के लिहाज से इस तरह का नियमित मुआवजा न तो लागत के हिसाब से प्रभावकारी है और न ही यह उपयुक्त है। ज्यादा अच्छी बात यह होगी कि ऐसे संस्थात्मक सुधार किए जाए जिससे ये समस्याएँ कम-से-कम हो जाएँ, और आखिरकार पूरी तरह से खत्म हो जाएँ। इसका अर्थ यह होगा कि विश्व की गरीबी की समस्या को बड़ी राजनीति में छोटा मुद्दा न माना जाए। यानी यह न समझा जाए कि यह हाशिए पर पड़ा हुआ ऐसा मुद्दा है, जिस पर विशेषज्ञ विचार कर सकते हैं। इसकी बजाय, इसे संस्थात्मक रूपरेखा से जुड़े हर फैसले में महत्वपूर्ण चिंता के रूप में देखा जाना चाहिए।

इस तरह, विश्व की प्रमुख सरकारें गरीबी के मुद्दे को मुख्यधारा में ला सकती हैं। लेकिन पश्चिमी सरकारें तब तक ऐसा नहीं करेंगी जब तक मतदाता इसकी माँग न करें या वे इसका अनुमोदन न करें। अभी स्थिति इसके विपरीत ही है। यह एक सच्चाई है कि गरीब लोगों की मुश्किलें दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं (आंशिक रूप से इसके लिए अमेरीका द्वारा उत्पन्न किया गया वैश्विक वित्तीय संकट जिम्मेदार है)। लेकिन इसके बावजूद अमेरीका के मतदाता गरीब देशों को मदद देने के मुद्दे को हिमायत नहीं कर रहे हैं।[58] महाद्वीपीय यूरोप (Continental Europe) के मतदाता विदेशी सहायता का कुछ ज्यादा समर्थन करते हैं। जर्मनी, इटली, फ्राँस और स्पेन के मतदाता यह मानते हैं कि सैन्य बजट में कटौती करके विदेशी सहायता के लिए बजट तैयार किया जाना चाहिए।[59] मतदाताओं के इस समर्थन के कारण ही यूरोप ने ज्यादा आधिकारिक विकास

---

[58] हाल में किए गए सीएनएन सर्वे (21-23 जनवरी 2011) में यह बात उभरकर सामने आई कि 81 प्रतिशत अमेरीकी यह चाहते हैं कि विदेशी सहायता में कटौती की जाए। सीएनएन, ओपिनीयन रिसर्च कॉरपोरेशन पोल- जनवरी 21 से 23, 2011 (जनवरी 25, 2011), http://I2.cdn.turner.com/cnn/2011/images/01/25/rel2d.pdf (इसे मैंने आखिरी बार 4 मार्च 2011 को देखा)।

[59] टोनी बार्बर, स्ट्राँग पब्लिक सपोर्ट फॉर स्पेंडिंग कट्स एक्रोस यूरोप, फायनेंसियल टाइम्स, जुलाई 12, 2010, वेब पता-

सहायता दी। यह इसकी कुल राष्ट्रीय आय का 0.45 प्रतिशत और अमेरीका की आय का 0.20 प्रतिशत है।[60] दोनों ही 1970 के दशक के इस पश्चिमी वायदे से बहुत कम हैं जिसमें यह कहा गया था कि ओडीए दरों को 0.70 प्रतिशत तक लाया जाएगा। सिर्फ पाँच छोटे देश– डेनमार्क, स्वीडन, नॉर्वे, लक्जमबर्ग और नीदरलैण्ड्स– ही इस वायदे का सम्मान कर रहे हैं। यह बात भी नोट किया जाना चाहिए कि अधिकांश विदेशी सहायता घरेलू निर्यातकों के फायदे या 'दोस्त' सरकारों की मदद में खर्च की जा रही है। ओडीए पर सालना कुल 120 अरब डॉलर खर्च किया जा रहा है। इसमें से सिर्फ 15.5 अरब ही 'बुनियादी सामाजिक सेवाओं' अर्थात् गरीबी या इसके प्रभावों को खत्म करने पर खर्च किया जाता है।[61]

यह बात स्पष्ट है कि नागरिकों के नजरिए से फर्क पड़ता है। यदि पश्चिमी राज्यों के नागरिक यह मानेंगे कि गरीबी से बचने की जरूरत है तो उनकी रानजीतिज्ञ भी ऐसे ही सोचेंगे। लेकिन यह मुमकिन है कि एक नागरिक व्यक्तिगत रूप से यह महसूस करे कि उसके पास कोई ताकत नहीं है। इस कारण वह भयंकर गरीबी के कायम रहने के संबंध में किसी भी तरह की जिम्मेदारी लेने से मना कर सकता है। लेकिन नागरिकों का बहुमत अपनी जिम्मेदारियों को इस तरह खारिज नहीं कर सकता है। इस मसले के महत्व को देखते हुए बहुमत के सदस्यों को खुद को संगठित करना चाहिए; या फिर उन्हें इस बात को सुनिश्चित करना चाहिए कि राजनेता इस बात को समझे कि राजनीति में सफल होने के लिए यह जरूरी है कि वे दुनिया के गरीबी के मसले पर गंभीरता से ध्यान दें। लेकिन जैसी कि वास्तविक स्थिति है, यदि किसी के सह–नागरिक विश्व की गरीबी के मुद्दे को प्राथमिकता देने के लिए तैयार नहीं हैं, तो कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अपने देश की नीतियों को बदलने या परा–राष्ट्रीय संस्थाओं की रूपरेखा को तय करने में

---

http://www.ft.com/cms/s/0/8f9e61c0-8ce2-11df-bad7-00144feab49a.html#axzz1FbgLKgVc (मैंने इसे आखिरी बार 4 मार्च 2011 को देखा).

[60] देखें यू.एन. स्टैटिक्स डिविजन, नेट ओडीए एज परसेंटेज ऑफ ओइसीडी/डीएसी डोनर्स जीएनआई (जून 23, 2010)
http://unstats.un.org/unsd/mdg/Search.aspx?q=bss%20oda (मैंने इसे आखिरी बार 4 मार्च 2011 को देखा)।

[61] आईडी., नेट ओडीए, मिलियन यूएस डॉलर एंड ओडीए टू बेसिक सोशल सर्विसेज, मिलियन यूएस डॉलर.

कुछ खास दखल नहीं दे सकता है। क्या ऐसी स्थिति में इन नागरिकों को अपने देश द्वारा किए जाने वाले मानवाधिकारों के उल्लंघन में सहभागी माना जाना चाहिए?

हम इस सवाल का जवाब सकारात्मक रूप में दे सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि ऐसे नगारिक गरीब देशों में जाकर बस सकते हैं। इस तरह वे अपने पुराने देश की नीतियों से नाता तोड़ सकते हैं और बहुत ही छोटे स्तर पर इसकी नीतियों को भी कमजोर कर सकते हैं। बहुत ज्यादा अन्याय होने की स्थिति में दूसरे देश में जाकर बस जाने का फैसला एक व्यवहारिक फैसला हो सकता है। मसलन, हरबर्ट अर्नस्ट कार्ल फ्रेहम (Herbert Ernst Karl Frahm) (जो बाद में विली ब्रैंट [Willy Brandt] हो गए) जर्मनी में नाजियों की स्थिति मजबूत होने पर जर्मनी छोड़कर चले गए। लेकिन आज विकसित पश्चिमी समाजों में लोकतांत्रिक संस्थाएँ अपने बुनियादी रूप में मौजूद हैं। ऐसे में, अपने देश के लोगों की चेतना को जगाने की कोशिश करना निरर्थक नहीं है। इसके अलावा, यदि इनकी सरकारें इनके नाम पर मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रही हैं, तो इसके उत्तरदायित्व से बचने के और भी कई ज्यादा बेहतर तरीके हैं। नागरिक अपने देश की सरकार द्वारा किए गए नुकसान के एक हिस्से के लिए मुआवजा दे सकते हैं। वे प्रभावकारी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों या गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से इस तरह की मदद दे सकते हैं। इस तरह का मुआवजा किसी दूसरे देश में जाकर बस जाने की तुलना में कहीं बेहतर विकल्प है। ऐसा मानने के दो कारण हैं। पहला, यह नागरिकों के लिए कम बोझिल है; दूसरा, यह मानवाधिकारों के उस घाटे को भी कम करता है, जिसकी कुछ जवाबदेही इन नागरिकों पर आती है। मुआवजा देने के इस विकल्प को स्वीकार्य बनाने के लिए यह जरूरी है कि सामाजिक संस्थाओं के बारे में हमारे मानवाधिकारों से जुड़े नकारात्मक कर्त्तव्यों में संशोधन किया जाए। मान लीजिए कि हम ज्यादा बेहतर संस्थाओं को स्थापित मानवाधिकारों के घाटे में कटौती कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में हम ऐसी सामाजिक संस्थाओं के निर्माण या लागू होने में कोई सहयोग न दें जिनसे मानवाधिकारों का घाटा होने का खतरा हो। लेकिन यदि हम मानवाधिकारों के घाटे में अपना वाजिब हिस्सा दे देते हैं तो हम इन संस्थाओं के निर्माण करने और इन्हें लागू करने में भी सहयोग दे सकते हैं।

मुआवजा देने का प्रस्ताव किस तरह कारगर हो सकता है? मान लीजिए कि कोई पहले के इस अनुमान को स्वीकार करता है कि 2005 में जिन लोगों के पास पर्याप्त जीवन-स्तर का अभाव था,

उन्हें वैश्विक घेरलू आय (global household income) का 2 प्रतिशत देने पर वे पर्याप्त जीवन-स्तर हासिल कर लेते। और आप यह कल्पना कीजिए कि 2005 में आपके घर की प्रति व्यक्ति आय 15,000 डॉलर थी। इस कारण आप दूसरे वेंटाइल (ventile) में शामिल हो गए। 2005 में ऊपरी दो वेंटाइल (ventile) के पास वैश्विक घरेलू आय का 68.54 प्रतिशत था, इसलिए उनकी सामूहिक आय के 2.9 प्रतिशत को गरीबों में स्थानान्तरित कर देना सैद्धांतिक रूप से बहुत ज्यादा गरीबी खत्म करने में मददगार होगा। यदि आप 2005 में वैश्विक गरीबी के अंतर में 435 डॉलर का योगदान दे देते (15,000 डॉलर का 2.9 प्रतिशत) तो आप इस बात के लिए निश्चिंत हो सकते थे कि आपने हमारी सरकारों द्वारा दुनिया के गरीबों पर सामूहिक रूप से थोपी गई परेशानियों में अपने वाजिब हिस्से के लिए मुआवजा दे दिया है।[62]

भाग IV. निष्कर्ष

मैंने यह दिखाने के लिए मुख्य रूप से दो कदम उठाए हैं कि हम सच में दुनिया के गरीबों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। भाग प्प में मानवाधिकारों के संकल्पना के अर्थ को तय किया गया है। यहाँ यह तर्क दिया गया है मानवाधिकारों को उल्लंघन एक तुलनात्मक विधेय (relational predicate) है। इसमें अधिकार-धारक (rights holder) और कर्त्तव्य-धारक (duty

[62] निश्चित रूप से इस गणना को बहुत सारे तरीकों से परिष्कृत करने की जरूरत है। पहला, मान लीजिए कि मानवाधिकारों को हासिल करने के लिए एक न्यायपूर्ण परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्था का निर्माण किया जाता है। यह व्यवस्था भी गरीबी को पूरी तरह खत्म नहीं कर सकती है। इसलिए हम हर तरह की और पूरी गरीबी के लिए सामूहिक रूप से खुद को जिम्मेदार नहीं मान सकते हैं। दूसरा, कुछ लोग अपनी नौकरियों के कारण ज्यादा कीमत वाले इलाकों में रहते हैं, यह उनके वाजिब हिस्से में कटौती कर सकता है। तीसरा, कुछ लोग हमारी तुलना में गरीब होते हैं। कम-से-कम तीसरे या चौथे वेंटाइल (ventile) के लोगों को इस श्रेणी में रखा जा सकता है। इन लोगों से भी मुआवजे में योगदान देने की अपेक्षा की जा सकती है। इससे हमारा वाजिब हिस्सा थोड़ा कम होगा। चौथा, जो लोग हमसे ज्यादा अमीर है उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी आय के अनुपातिक हिस्से (अर्थात् 2.9 प्रतिशत) से ज्यादा योगदान दें। आप आसानी से यह दलील दे सकते हैं कि आप 300 डॉलर तक ही दे सकते हैं। लेकिन विश्व के गरीब जिस भयंकर वंचना का सामना कर रहे हैं, और यह देखते हुए कि हमारे दानशील लोग मुआवजे के लिए जरूरी राशि का योगदान करने में नाकाम रहे हैं, और यह देखते हुए कि हम अपनी अच्छी किस्मत के कारण विशेष अधिकार प्राप्त लोगों के बीच पैदा हुए हैं (और शायद न्यायपूर्ण संस्थात्मक व्यवस्था में हम ज्यादा बेहतर स्थिति में हैं), हमें ज्यादा मुआवजा देने की गलती करनी चाहिए।

beares)- दोनों ही शामिल होते हैं। इसमें अधिकार-धारक के मानवाधिकारों के अपूर्ण रहने में कर्त्तव्य-धारक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मानवाधिकारों एक खास तरह का उल्लंघन सामान्य तौर पर पाया जाता है, लेकिन इसकी उपेक्षा की जाती है। अर्थात् ऐसी संस्थात्मक व्यवस्था का थोपा जाना जिससे लोगों की मानवाधिकार के लिए जरूरी वस्तुओं को पाने में मुश्किलों का सामना करना पड़े या वे उनसे वंचित हो जाएँ। मान लीजिए कि एक व्यक्ति 'लाइफ-गार्ड' की नौकरी लेता है और अपना काम करने में नाकाम रहता है। इसी से लोगों को नुकसान का सामना करना पड़ता है। इसी तरह से, मान लीजिए कि हम संस्थाओं को बनाने की जिम्मेदारी लेते हैं और ऐसी संस्थाएँ बनाने में नाकाम रहते हैं जिनमें लोगों के मानवाधिकार जहाँ तक मुमकिन हो वहाँ तक पूरे हो पाएँ। ऐसा होने का मतलब है कि हम लोगों का नुकसान कर रहे हैं। भाग प्प् में यह तर्क दिया गया है कि हम ऐसी परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्था को थोपने में सहयोग कर रहे हैं जो बहुत ज्यादा गहरे रूप में मानवाधिकारों का घाटा उत्पन्न कर रहा। दूसरी संस्थात्मक व्यवस्था अपनाकर मानवाधिकारों के इस घाटे से बचा जा सकता है। लेकिन हम ऐसा करने की बजाय वर्तमान परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्था में सहयोग कर रहे हैं। इस तरह हम दुनिया के अरबों गरीब लोगों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं।

यह कहते हुए इस निष्कर्ष की उपेक्षा की जा सकती है कि इसमें जो अनुभवसिद्ध आँकड़े दिए गए हैं वे पूरी तरह से पक्के नहीं हैं। मैंने ऊपर भी इस बात का संकेत किया है कि निश्चित रूप से यह बात मुमकिन है कि परा-राष्ट्रीय संस्थाओं की व्यवस्था के किसी वैकल्पिक रूप में भी वैश्विक माानवाधिकारों का घाटा इतना ही बड़ा होता। लेकिन मेरे निष्कर्षों पर शक करके इस बात को खारिज नहीं किया जा सकता है कि विश्व के गरीबों के प्रति हमारे कुछ साकारात्मक सहायता कर्त्तव्य हैं। यह बात खासतौर पर इसलिए सच है क्योंकि वर्तमान वैश्विक संस्थात्मक व्यवस्थाओं के पूर्वाग्रह-रहित जाँच पड़ताल का अभाव है। क्या हम अपने दौर के गरीब बहुमत से यह कहने जा रहे हैं कि चूंकि हमने (उनके शासक अभिजनों से मिलकर) पूरी दुनिया पर संस्थात्मक व्यवस्थाओं को थोपा है; लेकिन हमने इनके कारणात्मक प्रभाव का सही तरीके से परीक्षण नहीं किया है; इसलिए हम इस बारे में सुनिश्चित रूप से यह नहीं कह सकते हैं कि क्या ये संस्थाएँ ऐसे नुकसान कर रही हैं जिनसे बचा जा सकता है; इसलिए हम अपर्याप्त सबूत के साथ पेश किए गए इस दलील को खारिज करते हैं कि हम उनके मानवाधिकारों का उल्लंघन कर

रहे हैं? दरअसल, हमारे पास इस बात के बहुत ज्यादा सबूत मौजूद हैं कि वर्तमान परा-राष्ट्रीय संस्थात्मक व्यवस्थाएँ बड़े पैमाने पर मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रही है। इसलिए हमें इस बात पर जोर देना चाहिए कि इन व्यवस्थाओं और इनके प्रभावों की ज्यादा सावधानी से अध्ययन किए जाने की जरूरत है। हमें इन व्यवस्थाओं में ऐसे सुधार करने पर जोर देना चाहिए जिससे ये गरीबों की ज्यादा हिफाजत कर पाएँ। हममें से प्रत्येक व्यक्ति भी गरीब लोगों की हिफाजत के लिए काफी कुछ कर सकता है। हर व्यक्ति को हम सबके द्वारा किए जा रहे मानवाधिकारों के उल्लंघन में अपने वाजिब हिस्से का मुआवजा अदा करना चाहिए। ऐसा करके हर व्यक्ति गरीबों की हिफाजत में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

अनुवादक परिचयः कमल नयन चौबे दिल्ली विश्वविद्यालय के दयाल सिंह कॉलेज में राजनीति विज्ञान पढ़ाते हैं। इन्होंने भारत में 'आदिवासियों के वन भूमि अधिकारों का अध्ययन' विषय पर अपनी पीएच.डी की है। इनकी प्रकाशित किताबें हैं: कमल नयन चौबे, *जातियों का राजनीतिकरण: बिहार में पिछड़ी जातियों के उभार की दास्तान,* दिल्ली: वाणी प्रकाशन; विल किमलिका, *समकालीन राजनीति दर्शन: एक परिचय,* (अनुवाद: कमल नयन चौबे), दिल्ली: पियर्सन; राजीव भार्गव और अशोक आचार्य, *राजनीति विज्ञान: एक परिचय,* (अनुवाद: कमल नयन चौबे) दिल्ली: पियर्सन।